राधास्वामी दयाल की दया

राधास्वामी सहाय

संत संग्रह पहला भाग

जिसको

परम संत सतगुरु हुज़ूर महाराज ने चंद ग्रन्थों से मुन्तख़िब फ़र्माया
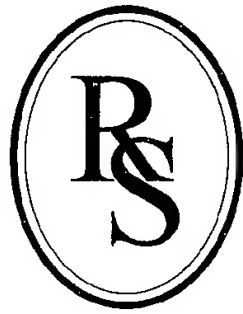
प्रकाशक

राधास्वामी ट्रस्ट

स्वामीबाग़, आगरा २८२ ००५

मूल्य 6/-

इक्कीसवीं बार ५००० } *सन्* २००१ ई० { *मूल्य* : अजिल्द

मुद्रक : **शकुन्तला प्रिन्टर्स एण्ड पब्लिशर्स** 11/41-D, रामबाग क्रासिंग, आगरा
दूरभाष : (आफिस) (0562) 521051 (प्रेस) 241753

तीसरी	बार	1000	सन्	1893	ईसवी
चौथी	"	"	सन्	1897	"
पाँचवीं	"	"	सन्	1901	"
छठी	"	"	सन्	1909	"
सातवीं	"	"	सन्	1912	"
आठवीं	"	"	सन्	1920	"
नवीं	"	"	सन्		"
दसवीं	"	"	सन्	1928	"
ग्यारवीं	"	"	सन्		"
बारहवीं	"	"	सन्	1934	"
तेरहवीं	"	"	सन्	1939	"
चौदहवीं	"	"	सन्	1943	"
पन्द्रहवीं	"	"	सन्	1957	"
सोलहवीं	"	2000	सन्	1960	"
सत्रहवीं	"	1000	सन्	1973	"
अट्ठारहवीं	"	2000	सन्	1978	"
उन्नीसवीं	"	2000	सन्	1984	"
बीसवीं	"	5000	सन्	1988	"
इक्कीसवीं	"	5000	सन्	2001	"

सूचीपत्र संत संग्रह *पहला भाग*

◆◆◆

राधास्वामी दयाल की दया

राधास्वामी सहाय

संत संग्रह पहला भाग

हुज़ूर राधास्वामी साहब के दोहे

।। मंगलाचरण ।।

राधास्वामी नाम, जो गावे सोई तरे ।
कल कलेश सब नाश, सुख पावे सब दुख हरे ।। १ ।।
ऐसा नाम अपार, कोई भेद न जानई ।
जो जाने सो पार, बहुरि न जग में जन्मई ।। २ ।।
राधास्वामी गाय कर, जनम सुफल कर ले ।
यही नाम निज नाम है, मन अपने धर ले ।। ३ ।।
बैठक स्वामी अद्भुती, राधा निरख निहार ।
और न कोई लख सके, शोभा अगम अपार ।। ४ ।।
गुप्त रूप जहँ धारिया, राधास्वामी नाम ।
बिना मेहर नहिं पावई, जहाँ कोई विश्राम ।। ५ ।।
कोटि कोटि करूँ बंदना, अरब खरब दंडौत ।
राधास्वामी मिल गये, खुला भक्ति का सोत ।। ६ ।।

संत मता सब से बड़ा, यह निश्चय कर जान ।
सूफ़ी और वेदान्ती, दोनों नीचे मान ।। १ ।।
संत दिवाली नित करें, सत्तलोक के माहिं ।
और मते सब काल के, योंही धूल उड़ाहिं ।। २ ।।
अल्लाहू त्रिकुटी लखा, जाय लखा महा सुन्न ।
शब्द अनाहू पाइया, भँवरगुफा की धुन्न ।। ३ ।।

हक़्क़ हक़्क़ सतनाम धुन, पाई चढ़ सच खंड ।
संत फ़क़्र बोली जुगल, पद दोउ एक अखंड ।। ४ ।।
संत दया सतगुरु मया, पाया आदि अनादि ।
गत मत कहते ना बने, सुरत भई बिस्माद ।। ५ ।।
जब आवे सुर्त देह में, देह रूप ले ठान ।
जब चढ़ उलटे सुन्न को, हंस रूप पहिचान ।। ६ ।।
सुरत रूप अति अचरजी, वर्णन किया न जाय ।
देह रूप मिथ्या तजा, सत्त रूप हो जाय ।। ७ ।।
सतगुरु संत दया करी, भेद बताया गुढ़ ।
अब सुन जीव न चेतई, तो जानो अति मूढ़ ।। ८ ।।
भव सागर धारा अगम, खेवटिया गुरु पूर ।
नाव बनाई शब्द की, चढ़ बैठे कोई सूर ।। ६ ।।
बिन सतगुरु सतनाम बिन, कोई न बाचे जीव ।
सत्तलोक चढ़ कर चलो, तजो काल की सीव ।। १० ।।
काल मता वेदान्त का, संतन कहा बनाय ।
सत्तनाम सतपुरुष का, भेद रहा अलगाय ।। ११ ।।
वेद बचन त्रैगुन विषय, तीन लोक की नीत ।
चौथे पद के हाल को, वह क्या जाने मीत ।। १२ ।।
लोक वेद में जो पड़े, नाग पांच डस खायँ ।
जनम जनम दुख में रहें, रोवें और चिल्लायँ ।। १३ ।।
जिन सतगुरु के बचन की, करी नहीं परतीत ।
नहिं संगत करी संत की, वे रोवें सिर पीट ।। १४ ।।
क्या हिन्दू क्या मुसलमान, क्या ईसाई जैन ।
गुरु भक्ती पूरन बिना, कोइ न पावे चैन ।। १५ ।।

यह करनी का भेद है, नाहीं बुद्धि विचार ।
बुद्धि छोड़ करनी करो, तो पाओ कुछ सार ।। १६ ।।
गुरु भक्ती दृढ़ के करो, पीछे और उपाय ।
बिन गुरु भक्ती मोह जग, कभी न काटा जाय ।। १७ ।।
मोटे बंधन जक्त के, गुरु भक्ती से काट ।
झीने बंधन चित्त के, कटें नाम परताप ।। १८ ।।
मोटे जब लग जायँ नहिं, झीने कैसे जायँ ।
ता ते सब को चाहिये, नित गुरु भक्ति कमायँ ।। १९ ।।
एक जन्म गुरु भक्ति कर, जन्म दूसरे नाम ।
जन्म तीसरे मुक्ति पद, चौथे में निज धाम ।। २० ।।

मैं तड़पी तुम दरस को, जैसे चन्द चकोर ।
सीप चहे जिमि स्वाँति को, मोर चहे घन घोर ।। १ ।।
जीव जले विरह अग्नि में, क्योंकर सीतल होय ।
बिन बरखा पिया बचन के, गई तरावत खोय ।। २ ।।
जिनको कंथ मिलाप है, तिन मुख बरसत नूर ।
घट सीतल हिरदा सुखी, बाजे अनहद तूर ।। ३ ।।
राधास्वामी रक्षक जीव के, जीव न जाने भेद ।
गुरु चरित्र जाने नहीं, रहे करम के खेद ।। ४ ।।
सुरत बसाओ शब्द में, शब्द गगन के माहिं ।
विरह बसाओ हिये में, हिया तिरकुटी माहिं ।। ५ ।।
सुरत शब्द इक अंग कर, देखो विमल बहार ।
मध्य सुखमना तिल बसे, तिल में जोत अकार ।। ६ ।।

शब्द स्वरूपी संग हैं, कभी न होते दूर ।
धीरज रखियो चित्त में, दीखेगा सत नूर ।। ७ ।।
सत्तनाम सतपुरुष का, सत्तलोक में पूर ।
सुरत चढ़ाओ शब्द में, दरशन हाल हुज़ूर ।। ८ ।।
प्रेम प्रीति राचे रहो, कुमति कुटिल से दूर ।
मन सूरत से जूझ कर, रहो शब्द में सूर ।। ९ ।।

कबीर साहब के दोहे

।। गुरुदेव का अंग ।।

गुरु को कीजे दंडवत, कोटि कोटि परनाम ।
कीट न जाने भृंग को, गुरु कर लें आप समान ।। १ ।।
गुरु को मानुष जानते, ते नर कहिये अन्ध ।
होयँ दुखी संसार में, आगे जम का फन्द ।। २ ।।
गुरु को मानुष जानते, चरनामृत को पान ।
ते नर नरके जायँगे, जन्म जन्म होय स्वान ।। ३ ।।
लाख कोस जो गुरु बसें, दीजे सुरत पठाय ।
शब्द तुरी असवार होय, छिन आवे छिन जाय ।। ४ ।।
जो गुरु बसें बनारसी, शिष्य समुन्दर तीर ।
एक पलक बिसरे नहीं, जो गुन होय शरीर ।। ५ ।।
पहले दाता शिष भया, जिन तन मन अरपा सीस ।
पीछे दाता गुरु भये, जिन नाम किया बख़सीस ।। ६ ।।
शिष खाँडा गुरु मसकला, चढ़े शब्द खरसान ।
शब्द सहे सन्मुख रहे, तो निपजे शिष्य सुजान ।। ७ ।।

सतगुरु साँचा सूरमा, नख सिख मारा पूर ।
बाहर घाव न दीसई, भीतर चकना चूर ।। ८ ।।
गुरू गुरू में भेद है, गुरू गुरू में भाव ।
सोइ गुरु नित बन्दिये, जो शब्द बताये दाव ।। ९ ।।
गुरू किया है देह का, सतगुरु चीन्हा नाहिं ।
भव सागर के जाल में, फिर फिर ग़ोता खाहिं ।। १० ।।
गुरु बिन अह निस नाम ले, नहीं संत पर भाव ।
कहें कबीर ता दास का, पड़े न पूरा दाव ।। ११ ।।
गुरु बिन माला फेरते, गुरु बिन देते दान ।
गुरु बिन दान हराम है, जा पूछो वेद पुरान ।। १२ ।।
कोटिन चन्दा ऊगवें, सूरज कोटि हज़ार ।
सतगुरु मिलिया बाहरा, दीसे घोर अँधार ।। १३ ।।
ऐसा कोई ना मिला, जासों रहिये लाग ।
सब जग जलता देखिया, अपनी अपनी आग ।। १४ ।।
ऐसे तो सतगुरु मिले, जिनसे रहियो लाग ।
सबही जग शीतल भया, जब मिटी आपनी आग ।। १५ ।।
यह तन विष की बेलरी, गुरु अमृत की खान ।
सीस दिये जो गुरु मिलें, तो भी सस्ता जान ।। १६ ।।
सतगुरु मारा तान कर, शब्द सुरंगी बान ।
मेरा मारा फिर जिये, तो हाथ न गहूँ कमान ।। १७ ।।
जाका गुरु है आंधरा, चेला खरा निरंध ।
अन्धे को अन्धा मिला, पड़ा काल के फंद ।। १८ ।।
कनफूँका गुरु हद्द का, बेहद का गुरु और ।
बेहद का गुरु जब मिले, तो लगे ठिकाना ठौर ।। १९ ।।

गुरु से ज्ञान जो लीजिये, सीस दीजिए दान ।
बहुतक भोंदू बह गये, राख जीव अभिमान ।। २० ।।
कबीर ते नर अन्ध हैं, गुरु को कहते और ।
हरि के रूठे ठौर है, गुरु रूठे नहिं ठौर ।। २१ ।।
गुरु समान दाता नहीं, जाचक शिष्य समान ।
चार लोक की संपदा, सो गुरु दीन्हीं दान ।। २२ ।।
सत्तनाम के पटतरे, देवे को कछु नाहिं ।
कहँ लों गुरु संतोषिये, हौंस रही मन माहिं ।। २३ ।।
मन दीया जिन सब दिया, मन के संग शरीर ।
अब देवे को क्या रहा, यों कथि कहें कबीर ।। २४ ।।
तन मन दिया तो भलकिया, सिर का जासी भार ।
जो कबहूँ कह मैं दिया, तो बहुत सहेगा मार ।। २५ ।।
तन मन दिया तो क्या हुआ, निज मन दिया न जाय ।
कहैं कबीर ता दास सों, कैसे मन पतियाय ।। २६।।
तन मन दीया आपना, निज मन ता के संग ।
कहैं कबीर निरभय भया, सुन सतगुरु परसंग ।। २७।।
निज मन तो नीचा किया, चरन कँवल की ठौर ।
कहैं कबीर गुरुदेव बिन, नज़र न आवे और ।। २८।।
गुरु माथे से ऊतरे, शब्द बिहूना होय ।
ता को काल घसीटि है, रोक न सक्के कोय ।। २९।।
गुरु को सिर पर राखिये, चलिये आज्ञा माहिं ।
कहैं कबीर ता दास को, तीन लोक डर नाहिं ।। ३०।।
चार खान में भरमता, कबहुं न लगता पार ।
सो तो फेरा मिट गया, सतगुरु के उपकार ।। ३१।।

तन मन ता को दीजिये, जाके विषया नाहिं ।
आपा सबही डार के, राखे साहव माहिं ।। ३२।।
गूँगा हुआ बावरा, बहरा हुआ कान ।
पाँवन ते पिंगला हुआ, सतगुरु मारा बान ।। ३३।।
सतगुरु पूरा ना मिला, सुनी अधूरी सीख ।
स्वाँग जती का पहन कर, घर घर माँगी भीख ।। ३४।।
झूठे गुरु की पक्ष को, तजत न कीजे बार ।
द्वार न पावे शब्द का, भटके बारम्बार ।। ३५।।
साँचे गुरु की पक्ष में, मन को दे ठहराय ।
चंचल से निश्चल भया, नहिं आवे नहिं जाय ।। ३६।।
गुरु बतावें साध को, साध कहैं गुरु पूज ।
अर्स पर्स के मेल में, भई अगम की सूझ ।। ३७।।
गुरु मिला तब जानिये, मिटे मोह तन ताप ।
हर्ष शोक व्यापे नहीं, तब गुरु आपे आप ।। ३८।।
जो कामिन परदे रहे, सुने न गुरु की बात ।
सो तो होगी सूकरी, फिरे उघारे गात ।। ३९।।
गुरू तुम्हारा कहाँ है, चेला कहाँ रहाय ।
क्यों करके मिलना भया, क्यों बिछुड़े आवे जाय ।। ४०।।
गुरू हमारा गगन में, चेला है चित माहिं ।
सुरत शब्द मेला भया, बिछुड़त कबहूँ नाहिं ।। ४१।।
नादी बिन्दी बहु मिले, करत कलेजे छेद ।
कोई तख़्त तले का ना मिला, जासे पूछूँ भेद ।। ४२।।
वस्तु कहीं ढूँढ़े कहीं, केहि विधि आवे हाथ ।
कहें कबीर तब पाइये, जब भेदी लीजै साथ ।। ४३।।

भेदी लीया साध कर, दीन्ही वस्तु लखाय ।
कोटि जन्म का पंथ था, पल में पहुँचा जाय ।। ४४।।
घट का परदा खोल कर, सन्मुख ले दीदार ।
बाल सनेही साइयां, आदि अंत का यार ।। ४५।।

।। सेवक का अंग।।

ऐसा कोई ना मिला, शब्द गुरू का मीत ।
तन मन सोंपे मिरग ज्यों, सुने बधिक का गीत ।। १ ।।
सेवक सेवा में रहे, सेवक कहिये सोय ।
कहें कबीर सेवा बिना, सेवक कभी न होय ।। २ ।।
सेवक सेवा में रहे, अंत कहूँ मति जाय ।
दुख सुख सिर ऊपर सहे, कहें कबीर समुझाय ।। ३ ।।
सेवक स्वामी एक मत, जो मत में मत मिल जाय ।
चतुराई रीझे नहीं, रीझे मन के भाय ।। ४ ।।
सतगुरु शब्द उलंघ कर, जो सेवक कहिं जाय ।
जहाँ जाय तहँ काल है, कहें कबीर समुझाय ।। ५ ।।
सेवक मुखा कहावही, सेवा में दृढ़ नाहिं ।
कहें कबीर सो सेवका, लख चौरासी जाहिं ।। ६ ।।
शिष को ऐसा चाहिए, गुरु को सरबस देय ।
गुरु को ऐसा चाहिए, शिष का कछु न लेय ।। ७ ।।
द्वार धनी के पड़ रहे, धका धनी का खाय ।
कबहुँ तो धनी निवाजई, जो दर छाँड़ न जाय ।। ८ ।।
कबीर गुरु सबको चहें, गुरु को चहे न कोय ।
जब लग आस शरीर की, तब लग दास न होय ।। ९ ।।

सेवक सेवा में रहे, सेव करे दिन रात ।
कहें कबीर कु-सेवका, सन्मुख ना ठहरात ।। १० ।।
फल कारन सेवा करे, तजे न मन से काम ।
कहें कबीर सेवक नहीं, चहे चौगुना दाम ।। ११ ।।
कबीर निरबंधन बँध रहा, बँध निरबन्धन होय ।
करम करे करता नहीं, दास कहावे सोय ।। १२ ।।
मेरा मुझ में कुछ नहीं, जो कुछ है सो तोर ।
तेरा तुझ को सौंपते, क्या लागेगा मोर ।। १३ ।।
तेरा तुझमें कुछ नहीं, जो कुछ है सो मोर ।
मेरा मुझ को सोंपते, जी धड़केगा तोर ।। १४ ।।
दुख सुख एक समान कर, हर्ष शोक नहिं व्याप ।
पर-उपकारी निःकामता, उपजे छोह न ताप ।। १५ ।।
गुरु समरथ सिर पर खड़े, कहा कमी तोहि दास ।
रिद्ध सिद्ध सेवा करे, मुक्ति न छाँड़े पास ।। १६ ।।
दास दुखी तो मैं दुखी, आदि अंत तिहुँ काल ।
पलक एक में प्रकट हो, छिन में करूँ निहाल ।। १७ ।।

।। भक्ति का अंग ।।

कबीर गुरु की भक्ति कर, तज विषया रस चौज ।
बार बार नहिं पाइ है, मानुष जन्म की मौज ।। १ ।।
भक्ति भाव भादों नदी, सभी चलीं घहराय ।
सरिता सोई सराहिये, जो जेठ मास ठहराय ।। २ ।।
भक्ति बीज बिनसे नहीं, आय पड़े जो झोल ।
कंचन जो विष्टा पड़े, घटे न ताको मोल ।। ३ ।।

प्रेम बिना जो भक्ति है, सो निज डिंभ विचार ।
उदर भरन के कारने, जनम गँवायो सार ।। ४ ।।
गुरु भक्ती अति कठिन है, ज्यों खाँड़े की धार ।
बिना साँच पहुँचे नहीं, महा कठिन ब्योहार ।। ५ ।।
भक्ति दुहेली गुरू की, नहिं कायर का काम ।
सीस उतारे हाथ सों, सो लेसी सतनाम ।। ६ ।।
जब लग भक्ति सकाम है, तब लग निष्फल सेव ।
कहें कबीर वे क्यों मिलें, निष्कामी निज देव ।। ७ ।।
कबीर गुरु की भक्ति का, मन में बहुत हुलास ।
मन मनसा माँजे नहीं, होन कहत है दास ।। ८ ।।
जान भक्त का नित मरन, अनजाने का राज ।
सर औसर समझे नहीं, पेट भरन सों काज ।। ६ ।।
हरख बड़ाई देख कर, भक्ति करे संसार ।
जब देखे कुछ हीनता, औगुन धरे गँवार ।। १० ।।
जब लगि नाता जाति का, तब लगि भक्ति न होय ।
नाता तोड़ भक्ती करे, भक्त कहावे सोय ।। ११ ।।
सत्तनाम हल जोतिया, सुमिरन बीज समाय ।
खंड ब्रह्मंड सूखा पड़े, भक्ति न बिरथा जाय ।। १२ ।।
भक्ति प्रान ते होत है, मन दे कीजे भाव ।
परमारथ परतीत में, यह तन जाय तो जाव ।। १३ ।।
भक्त भेख बहु अंतरा, जैसे धरनि अकास ।
भक्त लीन गुरु चरन में, भेख जगत की आस ।। १४ ।।
जहाँ भक्ति तहँ भेख नहिं, वर्णाश्रम तहँ नाहिं ।
नाम भक्ति जो प्रेम सों, सो दुर्लभ जग माहिं ।। १५ ।।

भक्ति कठिन अति दुर्लभ है, भेख सुगम निज सोय ।
भक्ति जो न्यारी भेख से, यह 'जाने सब कोय ।। १६ ।।
भक्ति पदारथ तब मिले, जब गुरु होयँ सहाय ।
प्रेम प्रीत की भक्ति जो, पूरन भाग मिलाय ।। १७ ।।

।। प्रेम का अंग ।।

यह तो घर है प्रेम का, खाला का घर नाहिं ।
सीस उतारे भुइँ धरे, तब पैठे घर माहिं ।। १ ।।
प्रेम न बाड़ी ऊपजे, प्रेम न हाट बिकाय ।
राजा राना जो रुचे, सीस देय ले जाय ।। २ ।।
प्रेम पिलाया जो पिये, सीस दक्षिणा देय ।
लोभी सीस न दे सके, नाम प्रेम का लेय ।। ३ ।।
आया प्रेम कहाँ गया, देखा था सब कोय ।
छिन रोवे छिन में हँसे, सो तो प्रेम न होय ।। ४ ।।
प्रेम प्रेम सब कोइ कहे, प्रेम न चीन्हे कोय ।
आठ पहर भीना रहे, प्रेम कहावे सोय ।। ५ ।।
बढ़े घटे छिन एक में, सो तो प्रेम न होय ।
अघट प्रेम पिञ्जर बसे, प्रेम कहावे सोय ।। ६ ।।
प्रेम पियारे लाल सों, मन दे कीजे भाव ।
सतगुरु के परताप से, भला बना है दाव ।। ७ ।।
प्रेमी ढूंढ़त मैं फिरूँ, प्रेमी मिले न कोय ।
प्रेमी सों प्रेमी मिले, गुरु भक्ती दृढ़ होय ।। ८ ।।
जा घट प्रेम न संचरे, सो घट जान मसान ।
जैसे खाल लुहार की, स्वाँस लेत बिन प्रान ।। ६ ।।

प्रेम बनिज नहिं कर सके, चढ़े न नाम की गैल ।
मानुष केरी खालरी, औढ़ फिरे ज्यों बैल ।। १० ।।
प्रेम बिना धीरज नहीं, विरह बिना बैराग ।
सतगुरु बिना मिटे नहीं, मन मनसा का दाग़ ।। ११ ।।
जहाँ प्रेम तहँ नेम नहिं, तहाँ न बुधि ब्यौहार ।
प्रेम मगन जब मन भया, तब कौन गिने तिथिवार ।। १२ ।।
प्रेम पाँवरी पहिर कर, धीरज काजल देय ।
सील सिंदूर भराय कर, यों पिव का सुख लेय ।। १३ ।।
प्रेम छिपाया ना छिपे, जा घट परघट होय ।
जौ पै मुख बोले नहीं, तो नैन देत हैं रोय ।। १४ ।।
प्रेम भाव इक चाहिये, भेख अनेक बनाय ।
भावे ग्रह में बास कर, भावे बन में जाय ।। १५ ।।
जोगी जंगम सेवड़ा, सन्यासी दुरवेश ।
बिना प्रेम पहुंचे नहीं, दुर्लभ सतगुरु देश ।। १६ ।।
पीया चाहे प्रेम रस, राखा चाहे मान ।
एक म्यान में दो खड़ग, देखा सुना न कान ।। १७ ।।
पिय रस पिया सो जानिये, उतरे नहीं खुमार ।
नाम अमल माता रहे, पिये अमी रस सार ।। १८ ।।
कबीर प्याला प्रेम का, अंतर लिया लगाय ।
रोम रोम में रम रहा, और अमल क्या खाय ।। १९ ।।
कबीर भट्टी प्रेम की, बहुतक बैठे आय ।
सिर सौंपे सो पीवसी, नातर पिय न जाय ।। २० ।।
जब मैं था तब गुरु नहीं, अब गुरु हैं हम नाहिं ।
प्रेम गली अति साँकरी, ता में दो न समाहिं ।। २१ ।।

नैनों की कर कोठरी, पुतली पलंग बिछाय ।
पलकों की चिक डाल के, पिया को लिया रिझाय ।। २२ ।।
जब लग मरने से डरे, तब लग प्रेमी नाहिं ।
बड़ी दूर है प्रेम घर, समुझ लेहु मन माहिं ।। २३ ।।
लौ लागी तब जानिये, छूट न कबहूँ जाय ।
जीवत लौ लागी रहे, मूए माहिं समाय ।। २४ ।।
लौ लागी कल ना पड़े, आप बिसर जन देह ।
अमृत पीवे आत्मा, गुरु से जुड़े सनेह ।। २५ ।।
जैसी लव पहिले लगी, तैसी निबहे और ।
अपनी देह की को गिने, तारे पुरुष करोड़ ।। २६।।
लागी लागी क्या करे, लागी बुरी बलाय ।
लागी सोई जानिये, जो वार पार हो जाय ।। २७।।
लागी लागी क्या करे, लागी नाहीं एक ।
लागी सोई जानिये, जो करे कलेजे छेक ।। २८ ।।
लागी लागी क्या करे, लागी सोइ सराह ।
लागी तबही जानिये, जो उठे कराह कराह ।। २९।।
लगी लगन छूटे नहीं, जीभ चोंच जरि जाय ।
मीठा कहा अंगार को, जाहि चकोर चबाय ।। ३०।।
जो तू पिय की प्यारिनी, अपना कर ले री ।
कलह कल्पना मेट के, चरनों चित दे री ।। ३१।।
पिया का मारग कठिन है, खाँडा हो जैसा ।
नाचन निकसी बापुरी, फिर घूँघट कैसा ।। ३२।।
पिया का मारग सुगम है, तेरा चलन अबेड़ा ।
नाच न जाने बापुरी, कहे आँगन टेढ़ा ।। ३३।।

जा खोजत ब्रह्मा थके, सुर नर मुनि देवा ।
कहैं कबीर सुन साधवा, कर सतगुरु सेवा ।। ३४ ।।
सीस उतारे भुइं धरे, ऊपर राखे पाँव ।
दास कबीरा यों कहे, ऐसा होय तो आव ।। ३५ ।।
यह तो घर है प्रेम का, मारग अगम अगाध ।
सीस काट पग तर धरे, तब निकट प्रेम का स्वाद ।। ३६ ।।
सीस काट पासंग किया, जीव सेर भर लीन ।
जो भावे सो आय लो, प्रेम आगे हम कीन ।। ३७ ।।
प्रेम पियाला भर पिया, राच रहे गुरु ज्ञान ।
दिया नगाड़ा प्रेम का, लाल खड़े मैदान ।। ३८ ।।
प्रेम बिकंता मैं सुना, माथा साटे हाट ।
पूछत बिलंब न कीजिये, ततछिन दीजे काट ।। ३९ ।।
प्रेम प्रीत में रच रहे, मोक्ष मुक्ति फल पाय ।
शब्द माहिं तब मिल रहे, नहिं आवे नहिं जाय ।। ४० ।।
जो तू प्यासा प्रेम का, सीस काट कर गोय ।
जब तू ऐसा करेगा, तब कुछ होय तो होय ।। ४१ ।।
और सुरत बिसरी सकल, लौ लागी रहे संग ।
आव जाव कासों कहूँ, मन राता गुरु रंग ।। ४२ ।।
जब लग कथनी हम कथी, दूर रहा जगदीस ।
लौ लागी कल ना पडे, अब बोलत नाहीं दीस ।। ४३ ।।

।। पतिवृता अर्थात गुरुमुख का अंग ।।

पतिव्रता के एक है, विभचारिन के दोय ।
पतिव्रता विभचारिनी, कहो क्यों मेला होय ।। १ ।।

पतिव्रता को सुख घना, जाके पति है एक ।
मन मैली विभचारिनी, जाके ख़सम अनेक ।। २ ।।
पतिव्रता मैली भली, काली कुचिल कुरूप ।
पतिव्रता के रूप पर, वारूँ कोटि सरूप ।। ३ ।।
पतिव्रता पति को भजे, और न आन सुहाय ।
सिंह बचा जो लंघना, तौ भी घास न खाय ।। ४ ।।
नैनों अंतर आव तू, नैन झाँप तोहि लूँ ।
ना मैं देखूँ और को, ना तोहि देखन दूँ ।। ५ ।।
कबीर सीप समुद्र की, रटे पियास पियास ।
और बूंद को ना गहे, स्वाँति बूंद की आस ।। ६ ।।
पपिहा का पन देख कर, धीरज रहे न रंच ।
मरते दम जल में पड़ा, तऊ न बोरी चंच ।। ७ ।।
मैं सेवक समरत्थ का, कबहु न होय अकाज ।
पतिव्रता नाँगी रहे, तो वाही पति को लाज ।। ८ ।।
मैं सेवक समरत्थ का, कोई पुरबला भाग ।
सोती जागी सुन्दरी, सांई दिया सुहाग ।। ९ ।।
पतिव्रता के एक तू, तुम बिन और न कोय ।
आठ पहर निरखत रहे, सोई सुहागिन होय ।। १० ।।
इक चित होय न पिय मिलें, पतिव्रत ना आवे ।
चंचल मन चहुँ दिस फिरे, पिय कहो कैसे पावे ।। ११ ।।
सुन्दर तो साँई भजे, तजे आन की आस ।
ताहि न कबहूँ परिहरे, पलक न छाँड़े पास ।। १२ ।।
चढ़ी अखाड़े सुन्दरी, माँड़ा पिउ सों खेल ।
दीपक जोया ज्ञान का, काम जरे ज्यों तेल ।। १३ ।।

सती जलन को नीकसी, चित धर एक विवेक ।
तन मन सौंपा पीव को, अन्तर रही. न रेख ।। १४ ।।
सती जलन को नीकसी, पिउ का सुमिर सनेह ।
शब्द सुनत जिव नीकसा, भूल गई सब देह ।। १५ ।।
पतिव्रता मैली भली, गले काँच की पोत ।
सब सखियन में यों दिपे, ज्यों रवि शशि की जोत ।। १६ ।।
पतिव्रता पति को भजे, पति भज धरे विश्वास ।
आन दिशा चितवे नहीं, सदा जो पिउ की आस ।। १७ ।।
पतिव्रता विभिचारिणी, इक मन्दिर में बास ।
यह रंग राती पीव की, वह घर घर फिरे उदास ।। १८ ।।
नाम न रटा तो क्या हुआ, जो अन्तर है हेत ।
पतिवरता पति को भजे, कबहुँ नाम नहिं लेत ।। १९ ।।
सुरत समानी नाम में, नाम किया परकाश ।
पतिवरता पति को मिली, पलक न छाँड़े पास ।। २० ।।
साँईं मोर सुलच्छना, मैं पतिवरता नार ।
देव दीदार दया करो, मेरे निज भरतार ।। २१ ।।
जो यह एक न जानिया, तो बहु जाने क्या होय ।
एकै ते सब होत हैं, सब सों एक न होय ।। २२ ।।
जो यह एकै जानिया, तौ जाना सब जान ।
जो यह एक न जानिया, तौ सबही जान बिजान ।। २३ ।।
सब आये उस एक में, डाल पात फल फूल ।
अब कहो पीछे क्या रहा, गह पकड़ा जब मूल ।। २४ ।।
एक नाम को जान कर, दूजा देय बहाय ।
तीरथ व्रत तप जप नहीं, सतगुरु चरन समाय ।। २५ ।।

मैं अबला पिउ पिउ करूँ, निगुन मेरा पीव ।
सुन्न सनेही गुरू बिन, और न देखूं जीव ।। २६।।
कबीर सीप समुद्र की, खारा जल नहिं लेय ।
पानी पीवे स्वाँति का, सोभा सागर देय ।। २७।।
ऊंची जाति पपीहरा, पिये न नीचा नीर ।
कै सुरपति को याँचई, कै दुख सहे शरीर ।। २८ ।।
पड़ा पपीहा सुरसरी, लगा अधिक का बान ।
मुख मूँदे सुर्त गगन में, निकस गये यों प्रान ।। २९ ।।
पपिहा पन को ना तजे, तजे तो तन बे काज ।
तन छूटे तो कुछ नहीं, पन छूटे है लाज ।। ३० ।।
चात्रिक सुतहिं पढ़ावही, आन नीर मत लेय ।
मम कुल येही रीत है, स्वाँति बूंद चित देय ।। ३१ ।।

।। सूरमा का अंग।।

गगन दमासा बाजिया, पड़त निशाने चोट ।
कायर भागे कुछ नहीं, सूरा भागे खोट ।। १ ।।
खेत न छाँड़े सूरमा, जूझे दो दल माहिं ।
आसा जीवन मरन की, मन में राखे नाहिं ।। २ ।।
अब तो जूझे ही बने, मुड़ चाले घर दूर ।
सिर साहब को सौंपते, सोच न कीजे सूर ।। ३ ।।
घायल तो घूमत फिरे, राखा रहे न ओट ।
जतन करे जीवे नहीं, लगी मरम की चोट ।। ४ ।।
घायल की गति और है, औरन की गति और ।
प्रेम बान हिरदे लगा, रहा कबीरा ठौर ।। ५ ।।

सूरे सीस उतारिया, छाँड़ी तन की आस ।
आगे से गुरु हरखिया, आवत देखा दास ।। ६ ।।
कबीर घोड़ा प्रेम का, कोई चेतन चढ़ असवार ।
ज्ञान खड्ग ले काल सिर, भली मचाई मार ।। ७ ।।
साध सती और सूरमा, इनकी बात अगाध ।
आसा छाँड़े देह की, तिन में अधिका साध ।। ८ ।।
सिर राखे सिर जात है, सिर काटे सिर सोय ।
जैसे बाती दीप की, कटि उजियारा होय ।। ९ ।।
धड़ सों सीस उतारि के, डार देहि ज्यों डेल ।
काहू सूर को सोहसी, यह घर जाने का खेल ।। १० ।।
सूरे के तो सिर नहीं, दाता के धन नाहिं ।
पतिव्रता के तन नहीं, सुरत बसे पिउ माहिं ।। ११ ।।
दाता के तो धन घना, सूरे के सिर बीस ।
पतिव्रता के तन सही, पत राखे जगदीस ।। १२ ।।
सूर चला संग्राम को, कबहुं न देवे पीठ ।
आगे चल पीछे फिरे, ताको मुख नहिं दीठ ।। १३ ।।
आब आंच सहना सुगम, सुगम खड़ग की धार ।
नेह निबाहन एक रस, महा कठिन ब्योहार ।। १४ ।।
नेह निबाहे ही बने, सोचे बने न आन ।
तन दे मन दे सीस दे, नेह न दीजे जान ।। १५ ।।
लड़ने को सब ही चले, शस्तर बाँध अनेक ।
साहब आगे आपने, जूझेगा कोइ एक ।। १६ ।।
जूझेंगे तब कहेंगे, अब कुछ कहा न जाय ।
भीड़ पड़े मन मस्ख़रा, लड़े किधों भगि जाय ।। १७ ।।

सूरा नाम धराय कर, अब क्या डरपे वीर ।
मँड रहना मैदान में, सन्मुख सहना तीर ।। १८ ।।
तीर तुपक से जो लड़े, सो तो सूर न होय ।
माया तज भक्ति करे, सूर कहावे सोय ।। १९ ।।
कबीर तोड़ा मान गढ़, मारे पाँच ग़नीम ।
सीस नवाया धनी को, साधी बड़ी मुहीम ।। २० ।।

।। मृतक का अंग ।।

मैं मुरजीवा समुंद का, डुबकी मारी एक ।
मुट्ठी लाया प्रेम की, जा में वस्तु अनेक ।। १ ।।
ऊँचा तरवर गगन फल, बिरला पक्षी खाय ।
इस फल को तो सो भखे, जो जीवत ही मर जाय ।। २ ।।
जब लग आस शरीर की, मिरतक हुआ न जाय ।
काया माया मन तजे, चौड़े रहे बजाय ।। ३ ।।
जीवत मिरतक हो रहो, ताजे ख़लक़ की आस ।
रक्षक समरथ सतगुरु, मत दुख पावे दास ।। ४ ।।
कबीर मन मिरतक हुआ, दुरबल हुआ शरीर ।
पीछे लागे हरि फिरें, कहें कबीर कबीर ।। ५ ।।
मन को मिरतक देख के, मत माने बिस्वास ।
साध जहाँ लों भय करें, जब लग पिंजर स्वाँस ।। ६ ।।
मैं जानूं मन मर गया, मर कर हूआ भूत ।
मूए पीछे उठ लगा, ऐसा मेरा पूत ।। ७ ।।
सूली ऊपर घर करे, बिष का करे अहार ।
तिसको काल कहा करे, जो आठ पहर हुशियार ।। ८ ।।

मन की मनसा मिट गई, अहं गई सब छूट ।
गगन मंडल में घर किया, काल रहा सिर कूट ।। ९ ।।
जा मरने से जग डरे, मेरे मन आनन्द ।
कब मरिहों कब पाइहों, पूरन परमानन्द ।। १० ।।
कबीर रोड़ा हो रह बाट का, तज आपा अभिमान ।
लोभ मोह तृष्णा तजे, ताहि मिले निज धाम ।। ११ ।।
रोड़ा हुआ तो क्या हुआ, पंथी को दुख देय ।
साधू ऐसा चाहिये, जस पैंड़े की खेह ।। १२ ।।
खेह भई तो क्या हुआ, उड़ उड़ लागत अंग ।
साधू ऐसा चाहिये, जैसे नीर निपंग ।। १३ ।।
नीर भया तो क्या हुआ, जो ताता सीरा होय ।
साधू ऐसा चाहिये, जो हरि ही जैसा होय ।। १४ ।।
हरी भया तो क्या भया, जो करता हरता होय ।
साधू ऐसा चाहिये, जो हरि भज निरमल होय ।। १५ ।।
निरमल भया तो क्या हुआ, जो निरमल माँगे ठौर ।
मल निरमल से रहित हैं, ते साधू कोइ और ।। १६ ।।

।। विरह का अंग।।

विरहिन देय संदेसरा, सूनो हमारे पीव ।
जल बिन मच्छी क्यों जिये, पानी में का जीव ।। १ ।।
विरह तेज मन में तपे, अंग सभी अकुलाय ।
घट सूना जिव पीव में, मौत ढूंढि फिर जाय ।। २ ।।
विरह जलंती देख कर, सांई आये धाय ।
प्रेम बूंद सों छिड़क के, जलती लई बुझाय ।। ३ ।।

कबीर सुन्दर यों कहे, सुनिये कहो सुजान ।
वेग मिलो तुम आय कर, नहिं तो तजिहों प्रान ।। ४ ।।
कै विरहिन को मीच दे, कै आपा दिखलाय ।
आठ पहर का दाझना, मोपै सहा न जाय ।। ५ ।।
विरह कमंडल कर लिये, बैरागी दो नैन ।
माँगे दर्श मधूकरी, छके रहैं दिन रैन ।। ६ ।।
यह तन का दिवला करूँ, बाती मेलूं जीव ।
लोहू सींचूं तेल ज्यों, कब मुख देखूं पीव ।। ७ ।।
विरहा आया दर्द से, कड़ुवा लागा कांम ।
काया लागी काल होय, मीठा लागा नाम ।। ८ ।।
कबीर हँसना दूर कर, रोने से कर चित्त ।
बिन रोये क्यों पाइये, प्रेम पियारा मित्त ।। ९ ।।
हँस २ कंथ न पाइयां, जिन पाया तिन रोय ।
हाँसी खेले पिउ मिलें, तो कौन दुहागिन होय ।। १० ।।
सुखिया सब संसार है, खावे और सोवे ।
दुखिया दास कबीर है, जागे और रोवे ।। ११ ।।
नाम वियोगी विकल तन, ताहि न चीन्हे कोय ।
तम्बोली के पान ज्यों, दिन दिन पीला होय ।। १२ ।।
नैन हमारे बावरे, छिन छिन लोड़ें तुज्झ ।
ना तुम मिलो न मैं सुखी, ऐसी वेदन मुज्झ ।। १३ ।।
माँस गया पिंजर रहा, ताकन लागे काग ।
साहब अजहुँ न आइया, कोइ मन्दर हमारा भाग ।। १४ ।।
विरहा सेती मति अड़े, रे मन मोर सुजान ।
हाड़ मास सब खात है, जीवत करे मसान ।। १५ ।।

विरह प्रबल दल साज के, घेर लियो मोहिं आय ।
नहिं मारे छांड़े नहीं, तड़फ तड़फ जिय जाय ।। १६ ।।
पिय बिन जिय तरसत रहे, पल पल विरह सताय ।
रैन दिवस मोहिं कल नहीं, सिसक सिसक दम जाय ।। १७ ।।
जो जन विरही नाम के, तिनकी गति है येह ।
देही से उद्यम करें, सुमिरन करें विदेह ।। १८ ।।
सांई सेवत जल गई, मांस न रहिया देह ।
सांई जब लग सेइहों, यह तन होइ न खेह ।। १६ ।।
निस दिन दाझे विरहनी, अन्तरगत की लाय ।
दास कबीरा क्यों बुझे, सतगुरु गये लगाय ।। २० ।।
पीर पुरानी विरह की, पिंजर पीर न जाय ।
एक पीर है प्रीत की, रही कलेजे छाय ।। २१ ।।
चोट सतावे विरह की, सब तन जरजर होय ।
मारन हारा जान ही, कै जिस लागी सोय ।। २२ ।।
विरह भुवंगन बस करी, किया कलेजे घाव ।
विरहिन अंग न मोड़ही, ज्यों भावे त्यों खाव ।। २३ ।।
विरहा विरहा मत कहो, विराह है सुलतान ।
जा घट विरह न संचरे, सो घट जान मसान ।। २४ ।।
देखत देखत दिन गया, निस भी देखत जाय ।
विरहिन पिय पावे नहीं, बेकल जिय घबराय ।। २५ ।।
गलूं तुम्हारे नाम पर, ज्यों आटे में नोन ।
ऐसा विरहा मेल कर, नित दुख पावे कौन ।। २६।।
सो दिन कैसा होयगा, गुरू गहेंगे बाँह ।
अपना कर बैठावहीं, चरन कँवल की छाँह ।। २७।।

जो जन विरही नाम के, सदा मगन मन माहिं ।
ज्यों दरपन की सुन्दरी, किनहूँ पकड़ी नाहिं ।। २८ ।।
हिरदे भीतर दौं जले, धुवाँ न परघट होय ।
जाके लागी सो लखे, कै जिन लाई सोय ।। २९ ।।
तन भीतर मन मानियां, बाहर कहूँ न लाग ।
ज्वाला ते फिर जल रहा, बुझी जलन्ती आग ।। ३० ।।

।। परचे का अंग ।।

पिउ परचे तब जानिये, पिउ से हिल मिल होय ।
पिउ की लाली मुख पड़े, परघट दीसे सोय ।। १ ।।
लाली मेरे लाल की, जित देखूँ तित लाल ।
लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल ।। २ ।।
जन पाँवन भुइँ बहु फिरे, घूमे देस विदेस ।
पिया मिलन जब होइया, आँगन हुआ विदेस ।। ३ ।।
उलट समाना आप में, प्रकटी जोत अनन्त ।
साहब सेवक एक सँग, खेलें सदा बसन्त ।। ४ ।।
हम बासी उस देस के, जहँ सत्तपुरुष की आन ।
दुख सुख कोइ व्यापे नहीं, सब दिन एक समान ।। ५ ।।
हम बासी उस देस के, जहँ बारह मास बिलास ।
प्रेम झिरे बिगसे कँवल, तेज पुंज परकास ।। ६ ।।
संशय करूँ न मैं डरूँ, सब दुख दिए निवार ।
सहज सुन्न में घर किया, पाया नाम अधार ।। ७ ।।
बिन पांवन का पथ है, बिन बस्ती का देश ।
बिना देह का पुरुष है, कहें कबीर संदेश ।। ८ ।।

नोन गला पानी भया, बहुर न भरि हैं गौन ।
सुरत शब्द मेला भया, काल रहा गहि मौन ।। ६ ।।
हिल मिल खेलूँ शब्द से, अन्तर रही न रेख ।
समझे का मत एक है, क्या पंडित क्या शेख़ ।। १० ।।
अलख लखा लालच लगा, कहत न आवे बैन ।
निज मन धसा स्वरूप में, सतगुरु दीन्हीं सैन ।। ११ ।।
जो कोई समझे सैन में, तासों कहिये बैन ।
सैन बैन समझे नही, तासों कुछ नहिं कहन ।। १२ ।।
कहना था सो कह चुके, अब कुछ कहा न जाय ।
एक रहा दूजा गया, दरिया लहर समाय ।। १३ ।।
पिंजर प्रेम प्रकासिया, जागी जोत अनंत ।
संशय छूटा भय मिटा, मिला पियारा कंत ।। १४ ।।
उनमुन लागी सुन्न में, निसदिन रहे ग़लतान ।
तन मन की कुछ सुधि नहिं, पाया पद निरबान ।। १५ ।।
मेरी मिटी मुक्ता भया, पाया नाम निवास ।
अब मेरे दूजा नहीं, एक तुम्हारी आस ।। १६ ।।
सुरत समानी निरत में, अजपा माहीं जाप ।
लेख समाना अलेख में, आपा माहीं आप ।। १७ ।।
गुरु मिले सीतल भया, मिटी मोह तन ताप ।
निस बासर सुख निधि लहूँ, अन्तर प्रगटे आप ।। १८ ।।
कौतुक देखा देह बिन, रवि शशि बिना उजास ।
साहब सेवा माहिं है, बे परवाही दास ।। १९ ।।
पवन नहीं पानी नहीं, नहीं धरन आकास ।
तहाँ कबीरा संत जन, साहब पास ख़वास ।। २० ।।

धजा फड़क्के सुन्न में, बाजे अनहद तूर ।
तकिया है मैदान में, पहुँचेगा कोइ सूर ।। २१ ।।
पूरे सों परिचय भया, दुख सुख मेला दूर ।
जम सों बाक़ी कट गई, साईं मिला हुज़ूर ।। २२ ।।
गुन इन्द्री सहजै गये, सतगुरु करी सहाय ।
घट में नाम प्रगट भया, बक बक मरे बलाय ।। २३ ।।
नाम रसायन प्रेम रस, पीवत अधिक रसाल ।
कबीर पीवन कठिन है, माँगे सीस कलाल ।। २४ ।।
राता माता नाम का, पीया प्रेम अघाय ।
मतवाला दीदार का, माँगे मुक्ति बलाय ।। २५ ।।

।। साध का अंग ।।

कबीर संगत साध की, हरे और की ब्याध ।
संगत बुरी असाध की, आठों पहर उपाध ।। १ ।।
कबीर संगत साध की, जौ की भूसी खाय ।
खीर खांड भोजन मिले, साकित संग न जाय ।। २ ।।
साध बड़े परमारथी, घन ज्यों बरसें आय ।
तपन बुझावें और की, अपनो पारस लाय ।। ३ ।।
कबीर संगत साध की, ज्यों गंधी की बास ।
जो कुछ गंधी दे नहीं, तो भी बास सुबास ।। ४ ।।
ऋद्धि सिद्धि माँगूँ नहीं, माँगूं तुम पर येहि ।
निस दिन दरसन साध का, कहें कबीर मोहिं देहि ।। ५ ।।
निरबैरी निःकामता, स्वामी सेती नेह ।
विषयन सों न्यारा रहे, साधन का मत येह ।। ६ ।।

सिंहों के लहँड़े नहीं, हंसों की नहिं पांत ।
लालों की नहिं बोरियाँ, साध न चलें जमात ।। ७ ।।
सिंह साध का एक मत, जीवत ही को खायँ ।
भाव हीन मिरतक दशा, ताके निकट न जायं ।। ८ ।।
रवि का तेज घटे नहीं, जो घन जुड़े घमंड ।
साध बचन पलटे नहीं, पलट जाय ब्रह्मंड ।। ६ ।।
साध कहावन कठिन है, ज्यों खांडे की धार ।
डिगमिगे तो गिर पड़े, निश्चल उतरे पार ।। १० ।।
जौन चाल संसार की, तौन साध की नाहिं ।
डिंभ चाल करनी करे, साध कहो मत ताहिं ।। ११ ।।
गांठी दाम न बांधई, नहिं नारी सों नेह ।
कहें कबीर ता साध की, हम चरनन की खेह ।। १२ ।।
जा घट में साईं बसे, सो क्यों छाना होय ।
जतन जतन कर दाबिये, तउ उजियारा होय ।। १३ ।।
आवत साध न हरखिया, जात न दीया रोय ।
कहें कबीर वा दास की, मुक्ति कहाँ से होय ।। १४ ।।
छाँजन भोजन प्रीत सों, दीजे साध बुलाय ।
जीवत जस है जक्त में, अन्त परन पद पाय ।। १५ ।।
साध हमारी आत्मा, हम साधन के जीव ।
साधन में हम यों रमें, ज्यों पय मद्धे घीव ।। १६ ।।
ज्यों पय मद्धे घीव है, यों रमियां सइ ठौर ।
कथता श्रोता बहुत हैं, मथ काढ़े ते और ।। १७ ।।
साध नदी जल प्रेम रस, तहां प्रछालूं अंग ।
कहें कबीर निरमल भया, साधू जन के संग ।। १८ ।।

अलख पुरुष की आरसी, साधों ही की देह ।
लखा जो चाहे अलख को, इन ही में लख लेह ।। १६ ।।
कोई आवे भाव ले, कोई आवे अभाव ।
साध दोऊ को पोखते, भाव न गिनें अभाव ।। २० ।।
कबीर दरसन साध का, करत न कीजे कान ।
ज्यों उद्यम से लक्ष्मी, आलस मन से हान ।। २१ ।।
कबीर दरसन साध का, साहब आवें याद ।
लेखे में सोई घड़ी, बाकी के दिन बाद ।। २२ ।।
ख़ाली साध न भेंटिये, सुन लीजे सब कोय ।
कहें कबीरा भेट धर, जो तेरे घर होय ।। २३ ।।
मन मेरा पंछी भया, उड़ कर चढ़ा अकास ।
स्वर्ग लोक ख़ाली पड़ा, साहब संतों पास ।। २४ ।।
नहिं सीतल है चन्द्रमा, हिम नहिं सीतल होय ।
कबीर सीतल संत जन, नाम सनेही सोय ।। २५ ।।
रक्त छाँड़ पय को गहे, ज्यों रे गऊ का बच्छ ।
औगुन छाँड़े गुन गहे, ऐसा साधु लच्छ ।। २६।।
साधू आवत देख कर, मन में धरे मरोर ।
सो तो होसी चूहरा[1], बसे गाँव के छोर ।। २७।।
साधन के मैं संग हूँ, अंत कहूँ नहिं जाउँ ।
जो मोहिं अरपे प्रीत सों, साधन मुख होय खाउँ ।। २८ ।।
साध मिले साहब मिले, अंतर रही न रेख ।
मनसा बाचा करमना, साधू साहब एक ।। २६ ।।
सुख देवें दुख को हरें, दूर करें अपराध ।
कहें कबीर वे कब मिलें, परम सनेही साध ।। ३० ।।

१ - भंगी

जाति न पूछो साध की, पूछ लीजिये ज्ञान ।
मोल करो तलवार का, पड़ा रहन दो म्यान ।। ३१ ।।
साध मिलें यह सब टलें, काल जाल जम चोट ।
सीस नवावत ढह पड़े, अघ पापन की पोट ।। ३२ ।।
साध चलत रो दीजिये, कीज अति सनमान ।
कहें कबीर तिस भेंट धर, अपने बित अनुमान ।। ३३ ।।
दरशन कीजे साध का, दिन में कई इक बार ।
आसोजा का मेंह ज्यों, बहुत करे उपकार ।। ३४ ।।
कई इक बेर न कर सके, तो दोय बेर कर लेय ।
कबीर साधू दरश तें, काल दग़ा नहिं देय ।। ३५ ।।
दोय बखत ना कर सके, तो दिन में इक बार ।
कबीर साधू दरस तें, उतरे भौजल पार ।। ३६ ।।
एक दिना नहिं कर सके, तो दूजे दिन कर लेय ।
कबीर साधू दरश तें, पावे उत्तम देह ।। ३७ ।।
दूजे दिन ना कर सके, तीजे दिन कर जाय ।
कबीर साधू दरश तें, मोक्ष मुक्ति फल पाय ।। ३८ ।।
तीजे चौथे ना करें, तो वार वार कर जाय ।
या में विलम्ब न कीजिये, कहें कबीर समुझाय ।। ३९ ।।
वार वार नहिं कर सके, तो पक्ष पक्ष कर लेय ।
कहें कबीर सो भक्त जन, जनम सुफल कर लेय ।। ४० ।।
पक्ष पक्ष नहिं कर सके, तो मास मास कर जाय ।
या में देर न लाइये, कहें कबीर समुझाय ।। ४१ ।।
मास मास नहिं कर सके, तो छठे मास अलबत्त ।
या में ढील न कीजिये, कहें कबीर अवगत्त ।। ४२ ।।

छठे मास नहिं कर सके, बरस दिना कर लेय ।
कहें कबीर सो भक्त जन, जमै चिनौती देय ।। ४३ ।।
बरस दिना नहिं कर सके, ताके लागे दोष ।
कहें कबीरा जीव सों, कबहूँ न पावे मोष ।। ४४ ।।

।। शब्द का अंग ।।

शब्दहि मारे मर गये, शब्दहि तजिया राज ।
जिन यह शब्द पिछानिया, सरिया तिनका काज ।। १ ।।
शब्द गुरू को कीजिए, बहु तक गुरु लबार ।
अपने अपने लोभ को, ठौर ठौर बटमार ।। २ ।।
शब्द हमारा हम शब्द के, शब्दहिं लेय परक्ख ।
जो तू चाहे मुक्ति को, अब मत जाय सरक्क ।। ३ ।।
शब्द हमारा हम शब्द के, शब्द ब्रह्म का कूप ।
जो चाहे दीदार को, परख शब्द का रूप ।। ४ ।।
एक शब्द गुरु देव का, जाका अनंत विचार ।
पंडित थाके मुनि जना, वेद न पावे पार ।। ५ ।।
शब्द शब्द सब कोई कहे, शब्द के हाथ न पाँव ।
एक शब्द औषध करे, एक शब्द करे घाव ।। ६ ।।
शब्द हमारा आदि का, पल पल करिये याद ।
अंत फलेगी माहिं की, बाहर की बरबाद ।। ७ ।।
शब्द बिना सुर्त आँधरी, कहो कहाँ को जाय ।
द्वार न पावे शब्द का, फिर फिर भटका खाय ।। ८ ।।
एक शब्द सुख रास है, एक शब्द दुख रास ।
एक शब्द बंधन कटे, एक शब्द गल फाँस ।। ९ ।।

यही बड़ाई शब्द की, जैसे चुम्बक भाय ।
बिना शब्द नहिं ऊबरे, केता करे उपाय ।। १० ।।
सही टेक है तासु की, जाके सतगुरु टेक ।
टेक निबाहे देह भर, रहे शब्द मिल एक ।। ११ ।।

।। सुमिरन का अंग ।।

दुख में सुमिरन सब करें, सुख में करे न कोय ।
जो सुख में सुमिरन करे, तो दुख काहे को होय ।। १ ।।
सुख में सुमिरन ना किया, दुख में कीया याद ।
कहें कबीर ता दास की, कौन सुने फ़रियाद ।। २ ।।
सुख के माथे सिल पड़े, जो नाम हृदय से जाय ।
बलिहारी वा दुक्ख की, जो पल पल नाम जपाय ।। ३ ।।
सुमिरन से सुख होत है, सुमिरन से दुख जाय ।
कहें कबीर सुमिरन किये, साँई माहिं समाय ।। ४ ।।
राजा राना राव रंक, बड़ा जो सुमिरे नाम ।
कहें कबीर बड़ों बड़ा, जो सुमिरे निःकाम ।। ५ ।।
सुमिरन की सुधि यों करो, जैसे कामी काम ।
एक पलक बिसरे नहीं, निस दिन आठों जाम ।। ६ ।।
सुमिरन की सुधि यों करो, ज्यों गागर पनिहार ।
हाले डोले सुरत में, कहै कबीर बिचार ।। ७ ।।
सुमिरन की सुधि यों करो, ज्यों सुरही सुत माहिं ।
कहें कबीर चारा चरत, बिसरत कबहूँ नाहिं ।। ८ ।।
सुमिरन की सुधि यों करो, जैसे दाम कंगाल ।
कहें कबीर बिसरे नहीं, पल पल लेय सम्हाल ।। ९ ।।

सुमिरन सों मन लाइये, जैसे नाद कुरंग ।
कहें कबीर बिसरे नहीं, प्रान तजे तेहिं संग ।। १० ।।
सुमिरन सों मन लाइये, जैसे दीप पतंग ।
प्रान तजे छिन एक में, जरत न मोड़े अंग ।। ११ ।।
सुमिरन सों मन लाइये, जैसे कीट भिरंग ।
कबीर बिसरे आप को, होय जाय तेहि रंग ।। १२ ।।
सुमिरन सों मन लाइये, जैसे पानी मीन ।
प्रान तजे पल बीछुड़े, संत कबीर कह दीन ।। १३ ।।
सुमिरन सुरत लगाय कर, मुख ते कछू न बोल ।
बाहर के पट देय कर, अंतर के पट खोल ।। १४ ।।
माला फेरत मन खुशी, ता ते कछू न होय ।
मन माला के फेरते, घट उजियारी होय ।। १५ ।।
माला फेरत जुग भया, फिरा न मन का फेर ।
कर का मनका डार दे, तू मन का मनका फेर ।। १६ ।।
कबीर माला काठ की, बहुत जतन का फेर ।
मन माला को फेरिये, जा में गाँठ न मेर ।। १७ ।।
बाहर क्या दिखलाइये, अंतर जपिये नाम ।
कहा महोला ख़लक़ सों, पड़ा धनी सों काम ।। १८ ।।
सहजे ही धुन होत है, हर दम घट के माहिं ।
सुरत शब्द मेला भया, मुख की हाजत नाहिं ।। १९ ।।
माला तो कर में फिरे, जीभ फिरे मुख माहिं ।
मनुआ तो दस दिस फिरे, यह तो सुमिरन नाहिं ।। २० ।।
तन थिर मन थिर बचन थिर, सुरत निरत थिर होय ।
कहें कबीर इस पलक को, कल्प न पावे कोय ।। २१ ।।

जाप मरे अजपा मरे, अनहद भी मर जाय ।
सुरत समानी शब्द में, ताहि काल नहिं खाय ।। २२ ।।
जाकी पूँजी स्वाँस है, छिन आवे छिन जाय ।
ता को ऐसा चाहिए, रहे नाम लौ लाय ।। २३ ।।
कहता हूँ कह जात हूँ, कहा बजाऊँ ढोल ।
स्वाँसा ख़ाली जात है, तीन लोक का मोल ।। २४ ।।
ऐसे महँगे मोल का, एक स्वाँस जो जाय ।
चौदह लोक पटतर नहीं, काहे धूर मिलाय ।। २५ ।।
नींद निशानी मीच की, उट्ठ कबीरा जाग ।
और रसायन छाँड़ कर, तू नाम रसायन लाग ।। २६।।
कबीर खुद्या[1] कूकरी, करत भजन में भंग ।
या को टुकड़ा डाल कर, सुमिरन करो निसंक ।। २७।।
चिन्ता तो सतनाम की, और न चितवे दास ।
जो कुछ चितवे नाम बिन, सोई काल की फाँस ।। २८ ।।
नाम जो रत्ती एक है, पाप जो रती हज़ार ।
आध रती घट संचरे, जारि करे सब छार ।। २९ ।।
सत्तनाम को सुमिरते, उधरे पतित अनेक ।
कहें कबीर नहिं छाँड़िये, सत्त नाम की टेक ।। ३० ।।
नाम जपत कन्या भली, साकित भला न पूत ।
छेरी के गल गलथना, जा में दूध न मूत ।। ३१ ।।
नाम जपत कुष्टी भला, चुइ चुइ पड़े जो चाम ।
कंचन देह किस काम की, जा मुख नाहिं नाम ।। ३२ ।।
जा की गाँठी नाम है, ताके है सब रिद्ध ।
कर जोरे ठाढ़ी सभी, आठ सिद्ध नौ निद्ध ।। ३३ ।।

१ – क्षुधा, भूख

मारग चलते जो गिरे, ताको नाहीं दोस ।
कहैं कबीर बैठा रहे, ता सिर करड़े कोस ।। ३४ ।।
पाँच सखी पिउ पिउ करें, छठा जो सुमरे मन ।
आई सुरत कबीर की, पाया नाम रतन ।। ३५ ।।
तू तू करता तू भया, मुझ मैं रही न हूँ ।
वारी तेरे नाम पर, जित देखूँ तित तूँ ।। ३६ ।।

।। करनी का अंग ।।

कथनी मीठी खाँड सी, करनी विष की लोय ।
कथनी से करनी करे, तो विष से अमृत होय ।। १ ।।
कथनी के सूरे घने, थोथे बाँधे तीर ।
प्रेम चोट जिनके लगी, तिनके विकल शरीर ।। २ ।।
कथनी बदनी छाँड़ कर, करनी सों चित लाय ।
नरहिं नीर प्याये बिना, कबहूँ प्यास न जाय ।। ३ ।।
करनी बिन कथनी कथे, अज्ञानी दिन रात ।
कूकर ज्यों भूसत फिरे, सुनी सुनाई बात ।। ४ ।।
करनी बिन कथनी कथे, गुरु पद लहे न सोय ।
बातों के पकवान से, धापा नाहिं कोय ।। ५ ।।
साखी लाय बनाय कर, इत उत अक्षर काट ।
कहैं कबीर कब लग जिये, जूठी पत्तल चाट ।। ६ ।।
पढ़ सुन के समझवाई, मन नहि बाँधे धीर ।
रोटी का संशय पड़ा, यों कह दास कबीर ।। ७ ।।
पानी मिले न आपको, औरन बख़्शत छीर ।
आपन मन निश्चल नहीं, और बँधावत धीर ।। ८ ।।

करनी करे सो पुत्र हमारा, कथनी कथे सो नाती ।
रहनी रहे सो गुरू हमारा, हम रहनी के साथी ।। ९ ।।
बानी तो पानी भरे, चारों वेद मजूर ।
करनी तो गारा करे, रहनी का घर दूर ।। १० ।।
कथनी कर फूला फिरे, मेरे हृदय उचार ।
भाव भक्ति समझे नहीं, आधा मूढ़ गँवार ।। ११ ।।
कथनी थोथी जगत में, करनी उत्तम सार ।
कहें कबीर करनी सबल, उतरे भौजल पार ।। १२ ।।
पद जोड़े साखी कहे, साधन पड़ गई रोस ।
काढ़ा जल पीवे नहीं, काढ़ि पियन की हौंस ।। १३ ।।
करनी को रज मानहीं, कथनी कथे अपार ।
इन बातों क्यों पाइये, साहब का दीदार ।। १४ ।।
जैसी मुख सों नीकसे, तैसी चालें नाहिं।
मानुष नहिं वह स्वान गति, बाँधे जमपुर जाहिं ।। १५ ।।
कबीर करनी क्या करे, जो गुरु नहिं होयँ सहाय ।
जेहि जेहि डाली पग धरे, सो सो निव २ जाय ।। १६ ।।
करनी करनी सब कहें, करनी माहिं विवेक ।
वह करनी बहि जान दे, जो नहिं परखे एक ।। १७ ।।

।। वैराग का अंग ।।

घर में रहे तो भक्ति कर, नातर कर वैराग ।
वैरागी होइ बन्धन करे, ता का बड़ा अभाग ।। १ ।।

धारें तो दोऊ भली, गिरही कै बैराग ।
गिरही दासातन करे, बैरागी अनुराग ।। २ ।।
टोटे में भक्ति करे, ताका नाम सपूत ।
माया धारी मस्ख़रे, केते ही गये ऊत ।। ३ ।।
कबीर सब जग निरधना, धनवंता नहिं कोय ।
धनवंता सो जानिये, सत्तनाम धन होय ।। ४ ।।
खाय पकाय लुटाय दे, करले अपना काम ।
चलती बिरियाँ रे नरा, संग न चले छदाम ।। ५ ।।
कबीर माया रूखड़ी, दो फल की दातार ।
खावत खरचत मुक्ति दे, संचत नर्क दुवार ।। ६ ।।
खान खरचन बहु अंतरा, मन में देख विचार ।
एक खवाये साध को, एक मिलाये छार ।। ७ ।।
सौ पापन का मूल है, एक रुपइया रोक ।
साधू होइ संग्रह करे, मिटे न संशय शोक ।। ८ ।।
स्वारथ का सब कोइ सगा, सारा ही जग जान ।
बिन स्वारथ आदर करे, सोई संत सुजान ।। ६ ।।
मर जाऊँ माँगू नहीं, अपने तन के काज ।
परमारथ के कारने, मोहिं न आवे लाज ।। १० ।।
जान बूझ जड़ हो रहे, बल तज निरबल होय ।
कहें कबीर ता दास को, गंज न सक्के कोय ।। ११ ।।

।। चितावनी का अंग ।।

कबीर काहे गरभिया, काल गहे कर केस ।
ना जानूं कित मारसी, क्या घर क्या परदेस ।। १ ।।

आज काल के बीच में, जंगल होइगा बास ।
ऊपर ऊपर हल फिरैं, ढोर चरेंगे घास ।। २ ।।
हाड़ जले ज्यों लाकड़ी, केस जले ज्यों घास ।
सब जग जलता देख कर, भये कबीर उदास ।। ३ ।।
झूंठे सुख को सुख कहें, मानत है मन मोद ।
जगत चबेना काल का, कुछ मुख में कुछ गोद ।। ४ ।।
कुसल कुसल की पूछते, जग में रहा न कोय ।
जरा मुई ना भय मुवा, कुशल कहाँ से होय ।। ५ ।।
पानी केरा बुलबुला, इस मानुष की जात ।
देखत ही छिप जायेंगे, ज्यों तारा परभात ।। ६ ।।
रात गँवाई सोय कर, दिवस गँवायो खाय ।
हीरा जनम अमोल था, कौड़ी बदले जाय ।। ७ ।।
कै खाना कै सोवना, और न कोई चीत ।
सतगुरु शब्द बिसारिया, आदि अंत का मीत ।। ८ ।।
इस औसर चेत्यो नहीं, पशू ज्यों पाली देह ।
सत्त शब्द जाना नहीं, अंत पड़ी मुख खेह ।। ६ ।।
आछे दिन पाछे गये, गुरु से किया न हेत ।
अब पछतावा क्या करे, जब चिड़िया खाया खेत ।। १० ।।
आज कहे मैं काल भजूंगा, काल कहे फिर काल ।
आज काल के करत ही, औसर जासी चाल ।। ११ ।।
पाव पलक की सुधि नहीं, करे काल का साज ।
काल अचानक मारसी, ज्यों तीतर को बाज़ ।। १२ ।।
पाव पलक तो दूर है, मोपै कहा न जाय ।
न जानूँ क्या होयगा, पाव विपल के माँय ।। १३ ।।

हम जाने थे खायंगे, बहुत जमी बहु माल ।
ज्यों का त्यों ही रह गया, पकड़ ले गया काल ।। १४ ।।
कबीर यह तन जात है, सके तो राख बहोर ।
ख़ाली हाथों वे गये, जिनके लाख करोर ।। १५ ।।
गाँठी होय सो हाथ कर, हाथ होय सो देह ।
आगे हाट न बानियाँ, लेना होय सो लेह ।। १६ ।।
देह धरे का गुन यही, देह देह कछु देह ।
कहें कबीरा देह तू, जब लग तेरी देह ।। १७ ।।
देह खेह हो जायगी, फिर कौन कहेगा देह ।
निश्चय कर उपकार ही, जीवन का फल येह ।। १८ ।।
धन दीये धन ना घटे, नदी न घट्टे नीर ।
अपनी आँखों देख लो, यों कथ कहें कबीर ।। १९ ।।
आस पास जोधा खड़े, सभी बजावें गाल ।
मंझ महल से ले चला, ऐसा काल कराल ।। २० ।।
हाँकों परबत फाटते, समुँदर घूंट भराय ।
ते मुनिवर धरती गले, क्या कोई गर्व कराय ।। २१ ।।
या दुनिया में आय के, छाँड़ देय तू ऐंठ ।
लेना होय हो जल्द ले, उठी जात है पैंठ ।। २२ ।।
यह दुनिया दो रोज़ की, मत कर यासे हेत ।
गुरु चरनन से लागिये, जो पूरन सुख देत ।। २३ ।।
तन सराय मन पाहरू, मंसा उतरी आय ।
कोउ काहू का है नहीं, सब देखा ठोंक बजाय ।। २४ ।।
तू मत जाने बावरे, मेरा है सब कोय ।
पिंड प्रान सों बँध रहा, यह नहिं अपना होय ।। २५ ।।

ऐसा संगी कोई नहीं, जैसा जिवरा देह ।
चलती बिरियां रे नरा, डार चला कर खेह ।। २६।।
मैं मैं बड़ी बलाय है, सको तो निकसो भाग ।
कहें कबीर कब लग रहे, रुई लपेटी आग ।। २७।।
कबीर आप ठगाइये, और न ठगिये कोय ।
आप ठगे सुख ऊपजे, और ठगे दुख होय ।। २८ ।।
कबीर नौबत आपनी, दिन दस लेहु बजाय ।
यह पुर पट्टन यह गली, बहुर न देखो आय ।। २९ ।।
सातों शब्द जो बाजते, घर घर होते राग ।
ते मंदिर ख़ाली पड़े, बैठन लागे काग ।। ३० ।।
ऊँचा महल चुनावते, करते होड़म होड़ ।
सुबरन कली ढलावते, गये पलक में छोड़ ।। ३१ ।।
पाँच तत्त का पूतला, मानुष धरिया नाम ।
दिना चार के कारने, फिर फिर रोके ठाम ।। ३२ ।।
कबीर मंदिर लाख का, जड़िया हीरा लाल ।
दिवस चार का पेखना, बिनस जायगा काल ।। ३३ ।।
कबीर मरेंगे मर जायँगे, कोई न लेगा नाम ।
ऊजड़ जाय बसायँगे, छोड़ बसंता गाम ।। ३४ ।।
मौत बिसारी बावरे, अचरज कीया कौन ।
तन माटी मिल जायगा, ज्यों आटे में नोन ।। ३५ ।।
जन्म मरन दुख याद कर, कूड़े काम निवार ।
जिन जिन पंथों चालना, सोई पंथ सँवार ।। ३६ ।।
कबीर खेत किसान का, मिरगों खाया झाड़ ।
खेत बिचारा क्या करे, जो धनी करे नहिं बाड़ ।। ३७ ।।

जेहि घट प्रीत न प्रेम रस, पुनि रसना नहिं नाम ।
ते नर पशु संसार में, उपज मरें बेकाम ।। ३८ ।।
सत्त नाम जाना नहीं, लागी मोटी खोर ।
काया हाँडी काठ की, ना वह चढ़े बहोर ।। ३९ ।।
कहा कियो हम आय के, कहा करेंगे जाय ।
इत के भये न उत्त के, चाले मूल गँवाय ।। ४० ।।
कबीर गुरु की भक्ति बिन, नारि कूकरी होय ।
गली गली भूसत फिरे, टूक न डारे कोय ।। ४१ ।।
कबीर गुरु की भक्ति बिन, राजा गदहा होय ।
माटी लदे कुम्हार की, घास न डारे कोय ।। ४२ ।।
कबीर यह तन जात है, सके तो ठौर लगाय ।
कै सेवा कर साध की, कै गुरु के गुन गाय ।। ४३ ।।
काया मंजन क्या करे, कपड़ा धोयम धोय ।
उज्जल हुआ न छूटसी, सुख नींदड़ी न सोय ।। ४४ ।।
उज्जल पहिने कापड़ा, पान सुपारी खाय ।
कबीर गुरु की भक्ति बिन, बाँधा जमपुर जाय ।। ४५ ।।
मोर तोर की जेवरी, बट बाँधा संसार ।
दास कबीरा क्यों बँधे, जाके नाम अधार ।। ४६।।
जो जाना वा गेह को, सो क्यों तोड़े मित्त ।
जैसे पर घर पाहुना, रहे उठाये चित्त ।। ४७।।
दुर्लभ मानुष जनम है, देह न बारम्बार ।
तरवर सों पत्ता झड़े, बहुर न लागे डार ।। ४८ ।।
आये हैं सो जायँगे, राजा रंक फ़क़ीर ।
एक सिंहासन चढ़ चले, इक बांधे जात ज़ंजीर ।। ४९ ।।

।। विभिचारिन का अंग।।

नारि कहावे पीव की, रहे और संग सोय ।
जार सदा मन में बसे, ख़सम ख़ुशी क्यों होय ।। १ ।।
सेज बिछावे सुन्दरी, अंतर परदा होय ।
तन सौंपे मन दे नहीं, सदा दुहागिन सोय ।। २ ।।
कबीर मन दीया नहीं, तन कर डाला ज़ेर ।
अंतरजामी लख गया, बात कहन का फेर ।। ३ ।।
मुख सों नाम रटा करे, निस दिन साधू संग ।
कहो धौं कौन कुफेर से, नाहिन लागत रंग ।। ४ ।।
मन दीया कहिं और ही, तन साधों के संग ।
कहें कबीर कोरी गजी, कैसे लागे रंग ।। ५ ।।
रात जगावे रांडिया, गावे विषया गीत ।
मारे लोंदा लापसी, गुरू न आवे चीत ।। ६ ।।
विभिचारिन विभचार में, आठ पहर हुशियार ।
कहें कबीर पतिवर्त बिन, क्यों रीझे भरतार ।। ७ ।।
विभिचारन के वश नहीं, अपनो तन मन होय ।
कहें कबीर पतिवर्त बिन, नारी गई बिगोय ।। ८ ।।
सत्तनाम को छाँड़ कर, करे और की आस ।
कहें कबीर ता नारि का, होय नर्क में बास ।। ९ ।।
कामी तरे क्रोधी तरे, लोभी तरे अनंत ।
आन उपासी किरतघन, तरे न नाम कहंत ।। १० ।।

।। असाध का अंग ।।

देखा देखी भक्ति का, कबहुँ न चढ़सी रंग ।
विपति पड़े पर छाँड़सी, ज्यों केंचुरी भुजंग ।। १ ।।
संगत भया तो क्या हुआ, जो हिरदा भया कठोर ।
नौ नेज़े पानी चढ़ा, तऊ न भींजी कोर ।। २ ।।
साधू भया तो क्या हुआ, माला पहरी चार ।
बाहर भेख बनाइया, भीतर भरी भंगार ।। ३ ।।
डाढ़ी मूंछ मुड़ाय कर, हूआ घोटम घोट ।
मन को क्यों नहिं मूढ़िए, जामें भरी है खोट ।। ४ ।।
कबीर भेख अतीत का, करे अधिक अपराध ।
बाहर दीखे साध गति, माहीं बड़ा असाध ।। ५ ।।
तन को जोगी सब करें, मन को करे न कोय ।
सहजै सब सिध पाइये, जो मन जोगी होय ।। ६ ।।
बाँबी कूटे बावरे, साँप न मारा जाय ।
मूरख बाँबी ना डसे, सर्प सबन को खाय ।। ७ ।।
मूरख के समुझावने, ज्ञान गाँठ का जाय ।
कोयला होय न ऊजला, सौ मन साबुन लाय ।। ८ ।।
दाग़ जो लागा नील का, सौ मन साबुन धोय ।
कोट जतन परबोधिये, कागा हंस न होय ।। ९ ।।

।। मन का अंग ।।

मन को मारूँ पटक के, टूक टूक हो जाय ।
विष की क्यारी बोय कर, लुनता क्यों पछिताय ।। १ ।।

यह मन फटक पिछौर ले, सब आपा मिट जाय ।
पिंगल होय पिव पिव करे, ताको काल न खाय ।। २ ।।
मन पाँचों के बस पड़ा, मन के बस नहिं पाँच ।
जित देखूं तित दौं लगी, जित भागूँ तित आँच ।। ३ ।।
कबीर बैरी सबल हैं, एक जीव रिपु पाँच ।
अपने अपने स्वाद को, बहुत नचावें नाच ।। ४ ।।
कबीर मन तो एक है, भावें तहाँ लगाय ।
भावें गुरु की भक्ति कर, भावें विषय कमाय ।। ५ ।।
मन के मारे बन गये, बन तज बस्ती माहिं ।
कहें कबीर क्या कीजिये, यह मन ठहरे नाहिं ।। ६ ।।
तीन लोक चोरी भई, सब का धन हर लीन्ह ।
बिना सीस का चोखा, पड़ा न काहू चीन्ह ।। ७ ।।
कबीर यह मन मस्ख़रा, कहूँ तो माने रोस ।
जा मारग साहब मिले, ताहि न चाले कोस ।। ८ ।।
मन मुरीद संसार है, गुरु मुरीद कोइ साध ।
जो माने गुरु बचन को, ता का मता अगाध ।। ६ ।।
जेती लहर समुद्र की, तेती मन की दौड़ ।
सहजे हीरा नीपजे, जो मन आवे ठौर ।। १० ।।
दौड़त दौड़त दौड़िया, जहँ लग मन की दौड़ ।
दौड़ थकी मन थिर भया, वस्तु ठौर की ठौर ।। ११ ।।
पहिले यह मन काग था, करता जीवन घात ।
अब तो मन हंसा भया, मोती चुन चुन खात ।। १२ ।।
कबीर मन परवत हता, अब मैं पाया जान ।
टाँकी लागी प्रेम की, निकली कँचन खान ।। १३ ।।

अगम पंथ मन थिर करे, बुद्धि करे परवेश ।
तन मन सब ही छाँड़ कर, तब पहुँचे वा देश ।। १४ ।।
मन ही को परबोधिये, मन ही को उपदेश ।
जो यह मन बस आवई, शिष्य होय सब देश ।। १५ ।।
शिष शाखा बहुतै किया, सतगुरु किया न मित्त ।
चाले थे सतलोक को, बीचहि अटका चित्त ।। १६ ।।
बात बनाई जग ठग्यो, मन परबोध्यो नाहिं ।
कबीर यह मन ले गया, लख चौरासी माहिं ।। १७ ।।
चतुराई क्या कीजिये, जो नहिं शब्द समाय ।
कोटिक गुन सूवा पढ़े, अंत बिलाई खाय ।। १८ ।।
अलमस्त फिरे क्या होत है, सुरत लीजिये धोय ।
चतुराई नहिं छूटसी, सुरत शब्द में पोय ।। १९ ।।
पढ़ना गुनना चातुरी, यह तो बात सहल ।
काम दहन मन बस करन, गगन चढ़न मुश्किल ।। २० ।।
पढ़ि पढ़ि के पत्थर भये, लिख लिख भये जो ईंट ।
कबीर अन्तर प्रेम की, लागी नेक न छींट ।। २१ ।।
नाम भजो मन बस करो, यही बात है तंत ।
काहे को पढ़ि पच मरो, कोटिन ज्ञान गिरंथ ।। २२ ।।
कबीर आधी साखि यह, कोटि ग्रन्थ कर जान ।
नाम सत्त जग झूठ है, सुरत शब्द पहिचान ।। २३ ।।
अपने उरझे उरझिया, दीखे सब संसार ।
अपने सुरझे सुरझिया, यह गुरु ज्ञान विचार ।। २४ ।।
मन के मते न चालिये, मन के मते अनेक ।
जो मन पर असवार हैं, सो साधू कोई एक ।। २५ ।।

कबीर पीढ़ी साँकरी, चंचल मनुआ चोर ।
गुन गावे लौलीन होय, कछु इक मन में और ।। २६।।
चंचल मनुआ चेत रे, सोवे कहा अजान ।
जमघर जम ले जायगा, पड़ा रहेगा म्यान ।। २७।।
कबीर मन मैला भया, या में बहुत विकार ।
यह मन कैसे धोइये, साधो करो विचार ।। २८ ।।
गुरु धोबी शिष कापड़ा, साबुन सिरजनहार ।
सुरत सिला पर धोइये, निकसे रंग अपार ।। २६ ।।
मन गोरख मन गोबिंदा, मन ही औघड़ सोय ।
जो मन राखे जतन कर, आपै करता होय ।। ३० ।।
पय पानी की प्रीतड़ी, पड़ा जो कपटी नोन ।
खंड खंड न्यारे भये, ताहि मिलावे कौन ।। ३१ ।।
मन मोटा मन पातला, मन पानी मन लाय ।
मन के जैसी ऊपजे, तैसी ही हो जाय ।। ३२ ।।
मन दाता मन लालची, मन राजा मन रंक ।
जो यह मन गुरु से मिले, तौ गुरु मिलें निशंक ।। ३३ ।।
कबहूँ मन गगना चढ़े, कबहूँ गिरे पताल ।
कबहूँ मन उनमुन लगे, कबहूँ जावे चाल ।। ३४ ।।
मन के बहुते रंग हैं, छिन छिन बदले सोय ।
एक रंग में जो रहे, ऐसा बिरला कोय ।। ३५ ।।
कोट करम पल में करे, यह मन विषया स्वाद ।
सतगुरु शब्द न मानही, जनम गँवावे बाद ।। ३६ ।।
कबीर मन ग़ाफ़िल भया, सुमिरन लागे नाहिं ।
घनी सहेगा त्रासना, जम की दरगह माहिं ।। ३७ ।।

महमंता मन मार ले, घट ही माहीं घेर ।
जब ही चाले पीठ दे, अंकुस दे दे फेर ॥ ३८ ॥
कागज़ केरी नाव री, पानी केरी गंग ।
कहें कबीर कैसे तरूँ, पाँच कुसंगी संग ॥ ३६ ॥
इन पाँचों से बँधिया, फिर फिर धरे शरीर ।
जो यह पाँचों बस करे, सोई लागे तीर ॥ ४० ॥
मनुआ तो पंछी भया, उड़ कर चला अकास ।
ऊपर ही ते गिर पड़ा, मन माया के पास ॥ ४१ ॥
मन पंछी तब लग उड़े, विषय बासना माहिं ।
प्रेम बाज़ की झपट में, जब लग आयो नाहिं ॥ ४२ ॥
जहाँ बाज़ बासा करे, पंछी रहे न और ।
जा घट प्रेम प्रगट भया, नहीं करम को ठौर ॥ ४३ ॥
मन कुंजर महमंत था, फिरता गहिर गम्भीर ।
दुहरी तिहरी चौहरी, पड़ गई प्रेम ज़ंजीर ॥ ४४ ॥
अपने अपने चोर को, सब ही डारे मार ।
मेरा चोर मुझे मिले, तो सरबस डारूँ वार ॥ ४५ ॥
कबीर यह मन लालची, समझे नहीं गँवार ।
भजन करन को आलसी, खाने को हुशियार ॥ ४६॥
इस तन में मन कहँ बसे, निकस जाय केहि ठौर ।
गुरु गम होय तो परख ले, नातर कर गुरु और ॥ ४७॥
नैनों माहीं मन बसे, निकस जाय नौ ठौर ।
गुरु गम भेद बताइया, सब संतन सिरमौर ॥ ४८ ॥
यह तो गति है अटपटी, सट पट लखे न कोय ।
जो मन की खट पट मिटे, चट पट दर्शन होय ॥ ४६ ॥

।। माया का अंग।।

माया तो ठगनी भई, ठगत फिरे सब सब देश ।
जा ठग ने ठगनी ठगी, ता ठग को आदेश ।। १ ।।
माया छाया एक सी, बिरला जाने कोय ।
भगता के पाछे लगे, सन्मुख भागे सोय ।। २ ।।
कबीर माया पापिनी, माँगे मिले न हाथ ।
मनों उतारी झूठ कर, लागी डोले साथ ।। ३ ।।
मोटी माया सब तजें, झीनी तजी न जाय ।
पीर पैग़म्बर औलिया, झीनी सब को खाय ।। ४ ।।
झीनी माया जिन तजी, मोटी दई बिलाय ।
ऐसे जन के निकट से, सब दुख गयो हिराय ।। ५ ।।
कबीर माया जात है, सुनो शब्द निज मोर ।
सखियों के घर साध जन, सूमों के घर चोर ।। ६ ।।
कबीर माया सूम की, देखन ही का लाड़ ।
जो वा में कौड़ी घटे, साँई तोड़े हाड़ ।। ७ ।।
कबीर माया रूखड़ी, दो फल की दातार ।
खावत खरचत मुक्त गये, संचत नर्क दुवार ।। ८ ।।
खान खरचन बहू अंतरा, मन में देख विचार ।
एक खवावे साध को, एक मिलावे छार ।। ९ ।।
आँधी आई प्रेम की, ढही भरम की भीत ।
माया टाटी उड़ गई, लगी नाम सों प्रीत ।। १० ।।
आस आस जग फंदिया, रहे उर्ध लिपटाय ।
गुरु आसा पूरन करें, सकल आस मिट जाय ।। ११ ।।

आसन मारे क्या हुआ, मरी न मन की आस ।
तेली केरा बैल ज्यों, घर ही कोस पचास ।। १२ ।।
जो तू चाहे मुज्झ को, मति कुछ राखे आस ।
मुज्झ सरीखा हो रहे, सब कुछ तेरे पास ।। १३ ।।
बहुत पसारा जनि करो, कर थोड़े की आस ।
बहुत पसारा जिन किया, ते भी गये निरास ।। १४ ।।
कबीर जोगी जक्त गुरु, तजे जगत की आस ।
जो जग की आसा करे, जगत गुरू वह दास ।। १५ ।।
आसा का ईंधन करो, मंसा करो भभूत ।
जोगी फेरी फिर करो, यों बन आवे सूत ।। १६ ।।
चौड़े बैठे जाय कर, नाम धरा रनजीत ।
साहब न्यारा देखिया, अन्तरगत की प्रीत ।। १७ ।।
कबीर माया पापिनी, ताही लाये लोग ।
पूरी किनहुँ न भोगिवी, इसका यही बिजोग ।। १८ ।।
कबीर माया मोहिनी, मोहे जान सुजान ।
भागे हूँ छूटे नहीं, भरि भरि मारै बान ।। १९ ।।
कबीर माया मोहिनी, जैसी मीठी खाँड़ ।
सतगुरु की किरपा हुई, नातर करती भाँड़ ।। २० ।।
कबीर माया मोहिनी, भइ अंधियारी लोय ।
जो सोते सो मुस लिये, रहे वस्तु को रोय ।। २१ ।।
कबीर माया डाकिनी, सब काहू को खाय ।
दाँत उखाड़े पापिनी, जो संतों नेरे जाय ।। २२ ।।
माया दासी संत की, ऊभी देत असीस ।
बिलसी अरु लातों छरी, सुमिर सुमिर जगदीस ।। २३ ।।

मीठा[1] सब कोई खात है, विष हो लागे धाय ।
नीब[2] न कोई पीवसी, सर्व रोग मिट जाय ।। २४ ।।
माया तरवर त्रिविधि का, सुक्ख दुक्ख संताप ।
सीतलता सपने नहीं, फल फीका तन ताप ।। २५ ।।
कबीर जग की क्या कहूँ, भौजल बूड़े दास ।
सत्त नाम पद छोड़ कर, करें मनुष्य की आस ।। २६।।
गुरु को छोटा जान कर, दुनिया आगे दीन ।
जीवन को राजा कहें, माया के आधीन ।। २७।।
जिनको साईं रँग दिया, कभी न होयँ कुरंग ।
दिन दिन बानी अग्गली, चढ़े सवाया रंग ।। २८ ।।
माया दीपक नर पतंग, भ्रम भ्रम माहिं परंत ।
कोई एक गुरु ज्ञान तें, उबरे साधू संत ।। २९ ।।

।। काम का अंग ।।

चलो चलो सब कोइ कहे, पहुँचे बिरला कोय ।
एक कनिक और कामिनी, दुरगम घाटी दोय ।। १ ।।
जग में भक्त कहावई, चुकट चून नहिं देय ।
शिष जोरू का हो रहा, नाम गुरू का लेय ।। २ ।।
पर नारी के राचने, सीधा नरके जाय ।
तिन को जम छाँड़े नहीं, कोटिन करे उपाय ।। ३ ।।
नैनों काजल देय कर, गाढ़े बाँधे केश ।
हाथों मेंहदी लाय कर, बाघिन खाया देश ।। ४ ।।

१ - भोग।   २ - नीम। नाम का रस।

नारी की झाँईं पड़त, अन्धे होत भुजंग ।
कबीर तिनकी कौन गति, जो नित नारि के संग ।। ५ ।।
कामी कुत्ता तीस दिन, अन्तर होय उदास ।
कामी नर कुत्ता सदा, छः ऋतु बारह मास ।। ६ ।।
कामी क्रोधी लालची, इनसे भक्ति न होय ।
भक्ति करे कोइ सूरमा, जाति बरन कुल खोय ।। ७ ।।
भक्ति बिगाड़ी कामिया, इन्द्री केरे स्वाद ।
हीरा खोया हाथ से, जन्म गँवाया बाद ।। ८ ।।
काम काम सब कोइ कहे, काम न चीन्हे कोय ।
जेती मन की कल्पना, काम कहावे सोय ।। ९ ।।
पर नारी पैनी छुरी, मति कोइ करो प्रसंग ।
दस मस्तक रावन गये, पर नारी के संग ।। १० ।।
नारि पराई आपनी, भोगे नरके जाय ।
आग आग सब एक सी, हाथ दिये जर जाय ।। ११ ।।
ज़हर पराया आपना, खाये से मर जाय ।
अपनी रक्षा ना करे, कहें कबीर समुझाय ।। १२ ।।
कूप पराया आपना, गिरे डूब सो जाय ।
ऐसा भेद विचार कर, तू मत ग़ोता खाय ।। १३ ।।
छुरी पराई आपनी, मारे दर्द जो होय ।
बहु बिधि कहुँ पुकार करि, कर छूओ मत कोय ।। १४ ।।
कामी कबहुँ न गुरु भजे, मिटे न सँशय सूल ।
और गुनाह सब बख़शिहों, कामी डाल न मूल ।। १५ ।।
काम क्रोध सूतक सदा, सूतक लोभ समाय ।
सील सरोवर न्हाइये, तब यह सूतक जाय ।। १६ ।।

जहाँ काम तहँ नाम नहिं, जहाँ नाम नहिं काम ।
दोनों कबहूँ ना मिलें, रवि रजनी इक ठाम ।। १७ ।।
कामिन काली नागिनी, तीनों लोक मँझार ।
नाम सनेही ऊबरे, विषया खाये झार ।। १८ ।।
कामिनि सुन्दर सर्पिनी, जो छेड़े तहि खाय ।
जो गुरु चरनन राचिया, तिन के निकट न जाय ।। १९ ।।
नारी निरख न देखिये, निरख न कीजे दौर ।
देखे ही तें विष चढ़े, मन आवे कुछ और ।। २० ।।
जो कबहूँ कर देखिये, बीर बहन के भाय ।
आठ पहर अलगा रहे, ताको काल न खाय ।। २१ ।।
सर्व सोने की सुन्दरी, आवे बास सुबास ।
जो जननी होय आपनी, तऊ न बैठे पास ।। २२ ।।
पर नारी के राचने, औगुन है गुन नाहिं ।
खार समुन्दर माछली, केती बह बह जाहिं ।। २३ ।।
नारि पुर्ष सब ही सुनो, सह सतगुरु की साख ।
विष फल फले अनेक हैं, मत कोइ देखो चाख ।। २४ ।।
नारि नसावे तीन गुन, जो नर पासे होय ।
भक्ति मुक्ति निज ध्यान में, बैठ न सक्के कोय ।। २५ ।।
गाय रोय हँस खेल के, हरत सबन के प्रान ।
कहें कबीर या घात को, समझें संत सुजान ।। २६।।
नारी नदी अथाह जल, बूढ़ मुवा संसार ।
ऐसा साधू ना मिला, जा संग उतरूँ पार ।। २७।।
गाय भैंस घोड़ी गधी, नारि नाम है तास ।
जा मन्दिर में यह बसें, तहाँ न कीजे बास ।। २८ ।।

एक कनक अरु कामिनी, विष फल किये उपाय ।
देखे ही तैं विष चढ़े, चाखत ही मर जाय ॥ २६ ॥
एक कनक और कामिनी, तजिये भजिये दूर ।
गुरु बिच डोरे अन्तरा, जम देसी मुख धूर ॥ ३० ॥
रज बीरज की कोठरी, ता पर साजो रूप ।
सत्तनाम गुरु बूडसी, कनक कामिनी कूप ॥ ३१ ॥
कामी तो निर्भय भया, करे न कबहूँ संक ।
इन्द्रिन केरे बस पड़ा, भोगे नर्क निसंक ॥ ३२ ॥
कहता हूँ कह जात हूँ, समझे नहीं गँवार ।
बैरागी गिरहीं कहा, कामी वार न पार ॥ ३३ ॥
नारी तो हम भी करी, जाना नहीं विचार ।
जब जाना तब परिहरी, नारी बड़ी विकार ॥ ३४ ॥
छोटी मोटी कामिनी, सब ही बिष की बेल ।
बैरी मारे दाँव से, यह मारे हँस खेल ॥ ३५ ॥

॥ मान का अंग ॥

कंचन तजना सहज है, सहज त्रिया का नेह ।
मान बड़ाई ईरषा, दुरलभ तजना येह ॥ १ ॥
माया तजी तो क्या हुआ, मान तजा नहिं जाय ।
मान बड़े मुनिवर गले, मान सबन को खाय ॥ २ ॥
काला मुख कर मान का, आदर लावे आग ।
मान बड़ाई छाँड़ कर, रहे नाम लौ आग ॥ ३ ॥
मान बड़ाई कूकरी, धरमराय दरबार ।
दीन लकुटिया बाहरा, सब जग खायो फाड़ ॥ ४ ॥

अहं अग्नि हिरदे जरे, गुरु से चाहे मान ।
तिन को जम न्योता दियो, हो हमरे मेहमान ।। ५ ।।
बड़ा हुआ तो क्या हुआ, जैसे पेड़ खजूर ।
पंथी को छाया नहीं, फल लागे अति दूर ।। ६ ।।
जहाँ आपा तहँ आपदा, जहँ सँशय तहँ सोग ।
कहें कबीर यह क्यों मिटे, चारों दीरघ रोग ।। ७ ।।
ऊँचे पानी ना टिके, नीचे ही ठहराय ।
नीचा होय सो भर पिये, ऊँच पियासा जाय ।। ८ ।।
लेने को सतनाम है, देने को अनदान ।
तरने को है दीनता, डूबन को अभिमान ।। ९ ।।

।। शील का अंग ।।

घायल ऊपर घाव ले, टोटे त्यागी सोय ।
भर जोबन में सीलवंत, कोइ बिरला होय तो होय ।। १ ।।
ज्ञानी ध्यानी संजमी, दाता सूर अनेक ।
जपिया पतिया बहुत हैं, सीलवन्त कोइ एक ।। २ ।।
सुख का सागर सील है, कोई न पावे थाह ।
शब्द बिना साधू नहीं, द्रव्य बिना नहिं साह ।। ३ ।।
विषय पियारे प्रीति से, तब लग गुरु मुख नाहिं ।
जब अन्तर सतगुरु बसें, विषया से रुचि नाहिं ।। ४ ।।

।। संतोष का अंग ।।

साध सन्तोषी सर्वदा, निरमल जिनके बैन ।
तिनके दरशन परस तें, जिव उपजे सुख चैन ।। १ ।।

चाह मिटी चिन्ता गई, मनुआ बे परवाह ।
जिन को कछू न चाहिये, सोई शाहनशाह ।। २ ।।
आब गई आदर गया, नैनन गया सनेह ।
यह तीनों तब ही गये, जब ही कहा कछु देह ।। ३ ।।
माँगन गये सो मर रहे, मरे सो माँगन जाहिं ।
तिन से पहले वे मरे, जो होत करत हैं नाहिं ।। ४ ।।
माँगन मरन समान है, मति माँगे कोइ भीख ।
माँगन से मरना भला, यह सतगुरु की सीख ।। ५ ।।
अनमाँगा तो अति भला, मांग लिया नहिं दोष ।
उद्र समाना मांग ले, निश्चय पावे मोष ।। ६ ।।
उत्तम भीख है अजगरी, सुन लीजे निज बैन ।
कहें कबीर ताके गहे, महा परम सुख चैन ।। ७ ।।
गोधन गजधन बाजधन, और रतन धन खान ।
जब आवे संतोष धन, सब धन धूल समान ।। ८ ।।

।। क्रोध का अंग ।।

यह जग कोठी काठ की, चहुँदिस लागी आग ।
भीतर रहे सो जल मुए, साधू उबरे भाग ।। १ ।।
क्रोध अग्नि घर घर बढ़ी, जले सकल संसार ।
दीन लीन जिन भक्ति में, तिन के निकट उबार ।। २ ।।
कोटि करम लागे रहें, एक क्रोध की लार ।
किया कराया सब गया, जब आया अहंकार ।। ३ ।।
जक्त माहिं धोखा घना, अहं क्रोध और काल ।
पार पहूँचा मारिये, ऐसा जम का जाल ।। ४ ।।

गार अंगारा क्रोध झल, निन्दा धूवाँ होय ।
इन तीनों को परिहरे, साध कहावे सोय ।। ५ ।।
आवत गाली एक है, उलटत होय अनेक ।
कहें कबीर न उलटिये, वाही एक की एक ।। ६ ।।
गाली सों सब ऊपजे, कलह कष्ट और मीच ।
हार चले सो संत है, लाग मरे सो नीच ।। ७ ।।
जग में बैरी कोइ नहीं, जो मन सीतल होय ।
यह आपा तू डाल दे, दया करे सब कोय ।। ८ ।।
ऐसी बानी बोलिये, मन का आपा खोय ।
औरन को सीतल करे, आपौ सीतल होय ।। ९ ।।
बोली तो अनमोल है, जो कोइ जाने बोल ।
हिये तराज़ू तोल कर, तब मुख बाहर खोल ।। १० ।।
कुबुध कमानी चढ़ रही, कुटिल बचन का तीर ।
भर भर मारे कान में, साले सकल शरीर ।। ११ ।।
कुटिल बचन सबसे बुरा, जार करे तन छार ।
साध बचन जल रूप है, बरसे अमृत धार ।। १२ ।।
चोट सुहेली सेल की, पड़ते लेय उसास ।
चोट सहारे शब्द की, तास गुरु मैं दास ।। १३ ।।
खोद खाद धरती सहे, काट कूट बनराय ।
कुटिल बचन साधू सहे, और से सहा न जाय ।। १४ ।।
सहज तराज़ू आन कर, सब रस देखा तोल ।
सब रस माहीं जीभ रस, जो कोइ जाने बोल ।। १५ ।।
शब्द बराबर धन नहीं, जो कोइ जाने मोल ।
हीरा तो दामों मिले, शब्द का मोल न तोल ।। १६ ।।

सीतल शब्द उचारिये, अहं आनिये नाहिं ।
तेरा प्रीतम तुज्झ में, दुशमन भी तुझ माहिं ।। १७ ।।

।। क्षमा का अंग ।।

वाद विवादे विष घना, बोले बहुत उपाध ।
मौन गहे सब की सहे, सुमिरे नाम अगाध ।। १ ।।
जहाँ दया तहँ धर्म है, जहाँ लोभ तहँ पाप ।
जहां क्रोध तहँ काल है, जहाँ छिमा तहँ आप ।। २ ।।

।। साँच का अंग ।।

साँई आगे साँच हो, साँई साँच सुहाय ।
भावे लम्बे केस कर, भावे घोट मुड़ाय ।। १ ।।
साँचे कोई न पतीजई, झूंठे जग पतियाय ।
गली गली गोरस फिरे, मदिरा बैठ बिकाय ।। २ ।।
सांचे को सांचा मिले, अधिका बढ़े सनेह ।
झूठे को सांचा मिले, तड़ दे टूटे नेह ।। ३ ।।
साधू ऐसा चाहिए, साँची कहे बनाय ।
कै टूटे कै फिरे जुड़े, बिन कहे भरम न जाय ।। ४ ।।
साँचे श्राप न लागई, साँचे काल न खाय ।
सांचे को साँचा मिले, साँचे माहिं समाय ।। ५ ।।
जाकी साँची सुरत है, ता का साँचा खेल ।
आठ पहर चौसठ घड़ी, साँई सेती मेल ।। ६ ।।

प्रेम प्रीत का चोलना, पहर कबीरा नाच ।
तन मन ता पर वारिहौं, जो कोइ बौले साँच ।। ७ ।।
सांच बिना सुमिरन नहीं, भय बिन भक्ति न होय ।
पारस में परदा रहे, कंचन किस विधि होय ।। ८ ।।
कबीर लज्जा लोक की, बोले नाहीं साँच ।
जान बूझ कंचन तजे, क्यों तू पकड़े काँच ।। ६ ।।
जो तू साँचा बानिया, साँची हाट लगाय ।
अन्दर झाड़ू देय कर, कूड़ा दूर बहाय ।। १० ।।

।। निन्दा का अंग ।।

दोष पराया देख कर, चले हसंत हसंत ।
अपना याद न आवई, जाका आदि न अंत ।। १ ।।
तिनको कबहुं न निन्दिये, जो पावन तल होय ।
कबहूँ उड़ आँखों पड़े, पीर घनेरी होय ।। २ ।।
निन्दक से कुत्ता भला, जो हट कर माँडे रार ।
कुत्ता से क्रोधी बुरा, जो गुरू दिखावे गार ।। ३ ।।
निन्दक नेरे राखिये, आंगन कुटी छवाय ।
बिन पानी साबुन बिना, निरमल करे सुभायं ।। ४ ।।
निन्दक दूर न कीजिये, कीजे आदर मान ।
निरमल तन मन सब करे, बके आनही आन ।। ५ ।।
कबीर निन्दक मत मरो, जीवो आद जुगाद ।
हम तो सतगुरु पाइया, निन्दक के परसाद ।। ६ ।।
साकित सूकर कूकरा, इनकी मति है एक ।
कोटि जतन परबोधिये, तऊ न छाड़े टेक ।। ७ ।।

कबीर मेरे साध की, निन्दा करो न कोय ।
जो पै चंद कलंक है, तउ उजियारा होय ।। ८ ।।
सातों सायर मैं फिरा, जंबु दीप दे पीठ ।
निन्दा पराई ना करे, सो कोइ बिरला दीठ ।। ६ ।।

।। बिनती का अंग ।।

औगुनहारा गुन नहीं, मन का बड़ा कठोर ।
ऐसे समरथ सतगुरू, ताहि लगावे ठौर ।। १ ।।
तुम तो समरथ साँइयाँ, दृढ़ कर पकड़ो बाँह ।
धुर ही ले पहुँचाइयो, जनि छाँड़ो मग माँह ।। २ ।।
सुरत करो मेरे साँइयाँ, हम हैं भौजल माँह ।
आपे ही बह जायँगे, जो नहिं पकड़ो बाँह ।। ३ ।।
घट समुद्र लख ना पड़े, उट्ठें लहर अपार ।
दिल दरिया समरथ बिना, कौन उतारे पार ।। ४ ।।
सब धरती काग़ज करूँ, लेखन सब बनराय ।
सात सिंध की मस करूँ, गुरु गुन लिखा न जाय ।। ५ ।।
मुझ औगुन है तुज्झ गुन, तुझ गुन औगुन मुज्झ ।
जो मैं बिसरूँ तुज्झ को, तुम मत बिसरो मुज्झ ।। ६ ।।
जो मैं भूल बिगाड़िया, ना कर मैला चित्त ।
साहब गरुवा लोड़िये, नफ़र बिगाड़े नित्त ।। ७ ।।
औंगुन किये तो बहु किये, करत न मानी हार ।
भावे बन्दा बख़शिये, भावे गरदन मार ।। ८ ।।
मैं अपराधी जन्म का, नख सिख भरा बिकार ।
तुम दाता दुख भंजना, मेरी करो सम्हार ।। ६ ।।

मन परतीत न प्रेम रस, ना कछु तन में ढंग ।
ना जानूं उस पीव से, क्यों कर रहसी रंग ।। १० ।।
क्या मुख ले बिनती करूँ, लाज आवत है मोहिं ।
तुम देखत औगुन करूँ, कैसे भाऊँ तोहि ।। ११ ।।
भक्तिदान मोहिं दीजिये, गुरु देवन के देव ।
और नहीं कुछ चाहिए, निस दिन तेरी सेव ।। १२ ।।
जो अब के सतगुरु मिलें, सब दुख आखूँ रोय ।
चरणों ऊपर सीस धर, कहूँ जो कहना होय ।। १३ ।।

।। तीरथ का अंग।

तीरथ ब्रत कर जग मुवा, ठंडे पानी न्हाय ।
सत्तनाम जाने बिना, काल जुगन जुग खाय ।। १ ।।
तीरथ चाले दो जनां, चित चंचल मन चोर ।
एको पाप न ऊतरा, लाये मन दस और ।। २ ।।
न्हाये धोये क्या भया, जो मन में मैल समाय ।
मीन सदा जल में रहे, धोये बास न जाय ।। ३ ।।
कोटि कोटि तीरथ करे, कोटि कोटि करे धाम ।
जब लग साघन सेइहै, तब लग कांचा काम ।। ४ ।।

।। मूरत का अंग।।

पाहन केरी पूतरी, कर पूजे करतार ।
याहि भरोसे मत रहो, बूड़ो काली धार ।। १ ।।

पाहन को क्या पूजिये, जो जन्म न देय जवाब ।
अन्धा नर आसामुखी, यों ही होय ख़राब ।। २ ।।
पाहन पानी मत पूजिये, सेवा जासी बाद ।
सेवा कीजे साध की, सत्तनाम कर याद ।। ३ ।।
कबीर दुनिया देहरे, सीस नवावन जाय ।
हिरदे माहीं गुरु बसें, तू ताहीं सों लौ लाय ।। ४ ।।
मन मथुरा दिल द्वारिका, काया काशी जान ।
दसों द्वार का देहरा, ता में जोत पिछान ।। ५ ।।

।। अहार का अंग ।।

खट्टा मीठा चरपरा, जिभ्या सब रस लेय ।
चोर अरु कुतिया मिल गई, पहरा किसका देय ।। १ ।।
अहार करे मन भावता, जिभ्या केरे स्वाद ।
नाक तलक पूरन भरे, को कहिये परशाद ।। २ ।।
रूखा सूखा खाय कर, ठंडा पानी पीव ।
देख पराई चूपड़ी, क्यों ललचावे जीव ।। ३ ।।
आधी अरु रूखी भली, सारी सो संताप ।
जो चाहेगा चूपड़ी, तो बहुत करेगा पाप ।। ४ ।।
कबीर साँई मुज्झ को, रूखी रोटी देह ।
चुपड़ी माँगत मैं डरूँ, रूखी छीन न लेह ।। ५ ।।
तिल भर मच्छी खाय कर, कोटि गऊ दे दान ।
काशी करवट ले मरे, तो भी नर्क निदान ।। ६ ।।
खुश खाना है खीचड़ी, माहिं पड़े टुक नोन ।
मास एक रत्ती खाय कर, गला कटावे कौन ।। ७ ।।

कहता हूँ कह जात हूँ, कहा जो मान हमार ।
जा का गल तुम काटिहो, सो काटि है तुम्हार ॥ ८ ॥

॥ निद्रा का अंग ॥

कबीर सोता क्या करे, सोये होय अकाज ।
ब्रह्मा का आसन डिगा, सुनी काल की गाज ॥ १ ॥
कबीर सोता क्या करे, उट्ठ न रोवे दुक्ख ।
जाका बासा गोर में, सो क्यों सोवे सुक्ख ॥ २ ॥
कबीर सोता क्या करे, जागन की कर चौंप ।
यह दम हीरा लाल है, गिन गिन गुरु को सौंप ॥ ३ ॥
सोता साध जगाइये, करे नाम का जाप ।
यह तीनों सोते भले, साकित सिंह और साँप ॥ ४ ॥
जागन से सोवन भला, जो कोइ जाने सोय ।
अन्तर लौ लागी रहे, सहजै सुमिरन होय ॥ ५ ॥
जागन में सोवन करे, सोवन में लौ लाय ।
सुरत डोर लागी रहे, तार टूट नहिं जाय ॥ ६ ॥
कबीर ख़ालिक़ जागिया, और न जागे कोय ।
कै जागे विषया भरा, कै दास बम्दगी सोय ॥ ७ ॥

॥ नशे का अंग ॥

भाँग भखे बल बुद्धि को, आफूं अहमक़ सोय ।
दो अमलन औगुन कहा, ज्ञानवन्त नर जोय ॥ १ ॥
औगुन कहूँ शराब का, ज्ञानवन्त सुन लेह ।
मानुष से पशुआ करे, द्रव्य गाँठ का देह ॥ २ ॥

।। व्यापकता का अंग।।

ज्यों नैनन में पूतली, त्यों ख़ालिक घट माहिं ।
मूरख लोग न जानहीं, बाहर ढूँढन जाहिं ।। १ ।।
ज्यों तिल माहीं तेल है, ज्यों चकमक में आग ।
तेरा प्रीतम तुज्झ में, जाग सके तो जाग ।। २ ।।
पुहुप मध्य ज्यों बास है, व्याप रहा सब माहिं ।
संतों माहीं पाइये, और कहूँ कछु नाहिं ।। ३ ।।
जा कारन जग ढूंढिया, सो तो घट ही माहिं ।
परदा दीया धरम का, तो तें सूझे नाहिं ।। ४ ।।

।। विवेक का अंग।।

फूटी आँख विवेक की, लखे न संत असंत ।
जाके सँग दस बीस हैं, ता का नाम महंत ।। १ ।।
साधू मेरे सब बड़े, अपनी अपनी ठौर ।
शब्द विवेकी पारखी, वह माथे की मौर ।। २ ।।
जब लग नहीं विवेक मन, तब लग लगे न तीर ।
भव सागर नाहीं तरे, सतगुरु कहें कबीर ।। ३ ।।
गुरुपशु नरपशु त्रियापशु, वेदपशू संसार ।
मानुष सोई जानिये, जाहि विवेक विचार ।। ४ ।।

।। नाम का अंग।।

नाम रतन धन पाय कर, गाँठी बाँध न खोल ।
नाहीं पन नहिं पारखी, नहिं गाहक नहिं मोल ।। १ ।।

नाम रतन धन मुज्झ में, खान खुली घट माहिं ।
सेंत मेंत ही देत हूँ, गाहक कोई नाहिं ।। २ ।।
जब गुन का गाहक मिले, तब गुन लाख बिकाय ।
जब गुन का गाहक नहीं, (तब) कौड़ी बदले जाय ।। ३ ।।
हीरा परखे जौहरी, शब्द को परखे साध ।
जो कोइ परखे साध को, ता का मता अगाध ।। ४ ।।
सभी रसायन हम करी, नहीं नाम सम कोय ।
रंचक घट में संचरे, सब तन कंचन होय ।। ५ ।।
गावनियाँ के मुख बसूं, अरु श्रोता के कान ।
ज्ञानी के हिरदे बसूं, भेदी का मैं प्रान ।। ६ ।।
जबही नाम हृदे धरा, भया पाप का नाश ।
मानो चिनगी आग की, पड़ी पुरानी घास ।। ७ ।।

।। उपदेश का अंग ।।

लेना है सो लेइ लो, कही सुनी मत मान ।
कही सुनी जुग जुग चली, आवागमन बँधान ।। १ ।।
स्वामी हो संग्रह करे, दूजे दिन को नीर ।
तरे न तारे और को, यों कथ कहें कबीर ।। २ ।।
कथा कीर्तन कलि बिषे, भवसागर की नाव ।
कहें कबीर जग तरन को, नाहीं और उपाव ।। ३ ।।
कथा कीर्तन करन को, जाके निज दिन रीत ।
कहें कबीर वा दास से, निश्चय कीजे प्रीत ।। ४ ।।
कथा कीर्तन छोड़ कर, करे जो और उपाय ।
कहें कबीर ता साध के, पास कोई मत जाय ।। ५ ।।

कथा कीर्तन रात दिन, जाके उद्यम येह ।
कहें कबीर ता साध की, हम चरनन की खेह ।। ६ ।।
कथा करो करतार की, निस दिन साँझ संवार ।
काम कथा को परिहरो, कहें कबीर विचार ।। ७ ।।
काम कथा सुनिये नहीं, सुन कर उपजे काम ।
कहें कबीर विचार कर, बिसर जात है नाम ।। ८ ।।
बंजारे का बैल ज्यों, टाँडा उतरा आय ।
एकन का दूना भया, इक चाले मूल गँवाय ।। ९ ।।

।। सूक्ष्म मार्ग का अंग ।।

उत तें कोई न आइया, जासे पूछूं धाय ।
इत तें सब कोइ जात हैं, भार लदाय लदाय ।। १ ।।
उत तें सतगुरु आइया, जिनकी मति बुधि धीर ।
भवसागर के जीव को, खेय लगावें तीर ।। २ ।।
गागर ऊपर गागरी, चोले ऊपर द्वार ।
सूली ऊपर साँथरा, तहाँ बुलावे यार ।। ३ ।।
कौन सुरत ले आवई, कौन सुरत ले जाय ।
कौन सुरत है इस्थिरी, सो गुरु देव बताय ।। ४ ।।
बास सुरत ले आवई, शब्द सुरत ले जाय ।
परचे सुरत है इस्थिरी, सो गुरु देइ बताय ।। ५ ।।
जा कारन मैं जात था, सो तो मिलिया आय ।
साँई तो सन्मुख भया, लाग क़बीरा पाँय ।। ६ ।।
जो आवे तो जाय नहीं, जाय तो आवे नाहिं ।
अकथ कहानी प्रेम की, समुझ लेहु मन माहिं ।। ७ ।।

कबीर भेदी भक्त सों, मेरा मन पतियाय ।
सेरी पावे शब्द की, निरभय आवे जाय ।। ८ ।।
भेदी जाने सर्व गुन, अनभेदी क्या जान ।
कै जाने गुरु पारखी, कै जिस लागा बान ।। ९ ।।
भेद ज्ञान तौलौं भलो, जौलौं मुक्ति न होय ।
परम जोत परघट भई, तब नहिं विकलप कोय ।। १० ।।

।। मिश्रित अंग ।।

जाके मन विश्वास है, सदा गुरु हैं संग ।
कोटि काल झकझोलई, तऊ न हो चित भंग ।। १ ।।
जाको राखे साँइयाँ, मारि न सक्के कोय ।
बाल न बाँका कर सके, जो जग बैरी होय ।। २ ।।
लखनहार ने लख लिया, जाको है गुरु ज्ञान ।
शब्द सुरत के अन्तरे, अलख पुरुष निरवान ।। ३ ।।
यार बुलावे भाव से, मौपै गया न जाय ।
धन मैली पिउ ऊजला, लाग न सक्कूं पांय ।। ४ ।।
जो कुछ आवे सहज में, सोई मीठा जान ।
कड़ुआ लागा नीम सा, जामें ऐंचा तान ।। ५ ।।
करता दीखे कीरतन, ऊँचा करके तुँड ।
जाने बूझे कुछ नहीं, यों ही आधा रुँड ।। ६ ।।
राज दुआरे साध जन, तीन वस्तु को जाय ।
कै मीठा कै मान को, कै माया की चाय ।। ७ ।।
पंडित केरी पोथियाँ, ज्यों तीतर का ज्ञान ।
औरत सगुन बतावई, आपा फन्द न जान ।। ८ ।।

संसकिरत है कूप जल, भाषा बहता नीर ।
भाषा सतगुरु सहित है, सत मत गहिर गँभीर ।। ९ ।।
नहिं कागज नहीं लेखनी, निःअक्षर हो जोय ।
पुस्तक छाँड़ जो बाँचई, पंडित कहिये सोय ।। १० ।।
गिरिये पर्वत शिखर से, पड़िये धरन मँझार ।
मूरख मित्र ने कीजिए, बूड़े काली धार ।। ११ ।।
प्रेम प्रीत से जो मिले, तासों मिलिये धाय ।
अन्तर राखे जो मिले, तासों मिले बलाय ।। १२ ।।
हाथी अटका कीच में, काढ़े कोइ समरत्थ ।
कै निकसे बल आपने, कै धनी पसारे हत्थ ।। १३ ।।
भूप दुखी अबधू दुखी, दुखी रंक विपरीत ।
कहें कबीर ये सब दुखी, सुखी संत मन जीत ।। १४ ।।
हिरदे माहीं आरसी, मुख देखो नहीं जाय ।
मुख तो जब ही देखिये, जो दिल की दुविधा जाय ।। १५ ।।
नवन नवन बहु अन्तरा, नवन नवन बहे बान ।
यह तीनों बहुतै नवें, चीता चोर कमान ।। १६ ।।
एक अचम्भा देखिया, हीरा हाट बिकाय ।
परखनहारा बाहरा, कौड़ी बदले जाय ।। १७ ।।
हीरा गुरु का शब्द है, हिरदे भीतर देख ।
बाहर भीतर भर रहा, ऐसा अगम अलेख ।। १८ ।।
आँखों देखा घी भला, मुख मेला नहिं तेल ।
साधू सों झगड़ा भला, नहिं साकित से मेल ।। १९ ।।
दया भाव हिरदे नहीं, ज्ञान कथे बेहद्द ।
ते नर नरके जायँगे, सुन सुन साखी शब्द ।। २० ।।

जूआ चोरी मुख़बिरी, ब्याज घूंस परनार ।
जो चाहे दीदार को, एती वस्तु निवार ।। २१ ।।
नाम बिना बेकाम हैं, छप्पन भोग बिलास ।
क्या इन्द्रासन बैठनो, क्या बैकुंठ निवास ।। २२ ।।
कबीर सोई पीर है, जो जाने पर पीर ।
जो पर पीर न जानई, सो क़ाफ़िर बे पीर ।। २३ ।।
तरवर सरवर संत जन, चौथे बरसे मेंह ।
परमारथ के कारने, चारों धारें देह ।। २४ ।।
उदर भरन के कारने, जग जाँच्यो निस जाम ।
स्वामीपन सिर पर चढ़ो, सरो न एको काम ।। २५ ।।
कलिकास्वामी लोभिया, मनसा रहा बंधाय ।
रुपया देवे ब्याज पर, लेखा करता जाय ।। २६।।
कबीर कलयुग कठिन है, साध न माने कोय ।
कामी क्रोधी मसख़रा, तिनका आदर होय ।। २७।।
सतगुरु संग साँची कथा, कोई न सुनई कान ।
कलजुग पूजा डिंभ की, बाज़ारी को मान ।। २८ ।।
पद गाये मन हरखिया, साखी कहे अनन्द ।
सत्तनाम नहिं जानिया, गल में पड़ गया फन्द ।। २९ ।।
जाके हिरदे गुरु नहीं, सिख साखा की भूख ।
सो नर ऐसा सूखसी, ज्यों बन दाझा रूख ।। ३० ।।
पंडित और मशालची, दोनों सूझे नाहिं ।
औरन को करें चाँदना, आप अँधेरे माहिं ।। ३१ ।।
नाचे गाये पद कहे, नाहीं गुरु से हेत ।
कहें कबीर क्यों ऊपजे, बीज बिहूना खेत ।। ३२ ।।

पढ़ा गुना सीखा सभी, मिटी न संशय सूल ।
कहें कबीर का सों कहूँ, यह सब दुख का मूल ।। ३३ ।।
कबीर ब्राह्मण की कथा, सो चोरन की नाव ।
सब अंधे मिल बैठिया, भावे तहँ ले जाव ।। ३४ ।।
रचनहार को चीन्ह ले, खाने को क्या रोय ।
दिल मन्दिर में पैठ कर, तान पिछौरा सोय ।। ३५ ।।
सब से भली मधूकरी, भाँत भाँत का नाज ।
दावा काहू का नहीं, बिना विलायत राज ।। ३६ ।।
सात दीप नौ खंड में, तीन लोक ब्रह्मंड ।
कहें कबीर सब को लगे, देह धरे का दंड ।। ३७ ।।
भौसागर जल विष भरा, मन नहीं बाँधे धीर ।
शब्द सनेही पिउ मिला, उतरा पार कबीर ।। ३८ ।।
सुपने में साँईं मिले, सोवत लिया जगाय ।
आँख न खोलूँ डरपता, मत सुपना हो जाय ।। ३९ ।।
हंसा बगुला एक रंग, मानसरोवर माहिं ।
बगुला ढूँढ़े माछली, हँसा मोती खाहिं ।। ४० ।।
तन संदूक़ मन रतन है, चुपके दे हठ ताल ।
गाहक बिना न खोलिये, पूँजी शब्द रसाल ।। ४१ ।।
पावक रूपी शब्द है, सब घट रहा समाय ।
चित चकमक लागे नहीं, ताते बुझ बुझ जाय ।। ४२ ।।
प्रीति बहुत संसार में, नाना विधि की सोय ।
उत्तम प्रीति सो जानिये, सतगुरु से जो होय ।। ४३ ।।
हम तुम्हारो सुमिरन करें, तुम मोहि चितवत नाहिं ।
सुमिरन मन की प्रीत है, सो मन तुमहीं माहिं ।। ४४ ।।

सोऊँ तो सुपने मिलूँ, जागूँ तो मन माहिं ।
लोचन राते शुभ घड़ी, बिसरत कबहूँ नाहिं ।। ४५ ।।
सम दृष्टि सतगुरु किया, मेटा भरम विकार ।
जह देखूँ तहँ एक ही, साहब का दीदार ।। ४६।।
तरवर तास बिलंबिये, बारह मास फलंत ।
सीतल छाया सघन फल, पंछी केल करंत ।। ४७।।
खुल खेलो संसार में, बाँध न सक्के कोय ।
घाट जगाती क्या करे, जो सिर बोझ न होय ।। ४८ ।।
घाट जगाती धर्मराय, सब का झारा लेय ।
सत्तनाम जाने बिना, उलट नर्क में देय ।। ४९ ।।
ज्ञानी तो नीडर भया, माने नाहीं संक ।
इन्द्रिन केरे बस पड़ा, भुगते नर्क निसंक ।। ५० ।।
ज्ञानी मूल गँवाइया, आप भये करता ।
ताते संसारी भला, जो सदा रहे डरता ।। ५१ ।।
मो में इतनी शक्ति कहँ, गाऊं गला पसार ।
बन्दे को इतनी धनी, पड़ा रहे दरबार ।। ५२ ।।

।। तुलसी साहब के दोहे।।

सुरत सैल असमान की, लख पावे कोइ संत ।
तुलसी जग जाने नहीं, अति उतंग पिया पंथ ।। १ ।।
दिना चार का खेल है, झूठा जक्त पसार ।
जिन विचार पति ना लखा, बूड़े भौजल धार ।। २ ।।
एक भरोसा एक बल, एक आस विश्वास ।
स्वाँति सलिल गुरु चरन हैं, चात्रिक तुलसीदास ।। ३ ।।

तुलसी ऐसी प्रीत कर, जैसे चन्द चकोर ।
चोंच झुकी गरदन लगी, चितवत वाही ओर ।। ४ ।।
उत्तम और चंडाल घर, जहँ दीपक उजियार ।
तुलसी मते पतंग के, सभी जोत इकसार ।। ५ ।।
तुलसी कँवलन जल बसे, रवि ससि बसे अकास ।
जो जाके मन में बसे, सो ताही के पास ।। ६ ।।
मकरी उतरे तार से, पुन गहि चढ़त जो तार ।
जा का जासों मन रम्यो, पहुँचत लगे न बार ।। ७ ।।
तुलसी या संसार में, पाँच रतन हैं सार ।
साध-संग सतगुरु-सरन, दया दीन उपकार ।। ८ ।।
नीच नीच सब तर गये, संत चरन लौलीन ।
जातहि के अभिमान से, डूबे बहुत कुलीन ।। ९ ।।
जैसो तैसो पातकी, आवे गुरु की ओट ।
गाँठी बाँधी संत से, ना परखो खरखोट ।। १० ।।
सोना काई नहीं लगे, लोहा घुन नहिं खाय ।
बुरा भला जो गुरु भगत, कबहूँ नर्क न जाय ।। ११ ।।
दर दरबारी साध हैं, उनमें सब कुछ होय ।
तुर्त मिलावें नाम से, उन्हें मिले जो कोय ।। १२ ।।
कोई तो तन मन दुखी, कोई चित्त उदास ।
एक एक दुख सबन को, सुखी संत का दास ।। १३ ।।
बड़े बड़ाई पाय कर, रोम रोम अहंकार ।
सतगुरु के परचे बिना, चारों बरन चमार ।। १४ ।।
काम क्रोध मद लोभ की, जब लग मन में खान ।
तुलसी पंडित मूरखो, दोनों एक समान ।। १५ ।।

मन राखत बैराग में, घर में राखत राँड ।
तुलसी किड़वा नीम का, चाखन चाहत खाँड ।। १६ ।।
अर्ब खर्ब लों लक्ष्मी, उदय अस्त लों राज ।
तुलसी जो निज मरन है, तो आवे केहि काज ।। १७ ।।
पानी बाढ़ो नाव में, घर में बाढ़ो दाम ।
दोनों हाथ उलीचिये, यही सयानो काम ।। १८ ।।
चार अठारह नौ पढ़े, खट पढ़ि खोया मूल ।
सुरत शब्द चीन्हें बिना, ज्यों पंछी चंडूल ।। १६ ।।
पढ़ पढ़ के सब जग मुवा, पंडित भया न कोय ।
ढ़ाई अक्षर प्रेम के, पढ़े सो पंडित होय ।। २० ।।
लिख २ के सब जग लिख्यो, पढ़ पढ़ के कहा कीन्ह ।
बढ़ बढ़ के घट घट गये, तुलसी संत न चीन्ह ।। २१ ।।
तुलसी सम्पत के सखा, पड़त विपत में चीन्ह ।
सज्जन कंचन कसन को, विपत कसौटी कीन्ह ।। २२ ।।
मन थिर कर जाने नहीं, ब्रह्म कहें गुहराय ।
चौरासी के फन्द में, फेर पड़ेंगे आय ।। २३ ।।
तुलसी मैं तू जो तजे, भजे दीन गत सोय ।
गुरू नवे जो शिष्य को, साध कहावे सोय ।। २४ ।।

।। दादू साहब के दोहे।।

साँईं सत संतोष दे, भाव भक्ति विश्वास ।
सिदक़ सबूरी साँच दे, माँगे दादू दास ।। १ ।।
जीवत माटी हो रहो, साँईं सनमुख होय ।
दादू पहिले मर रहो, पीछे मरे सब कोय ।। २ ।।

दादू दावा दूर कर, निरदावे दिन काट ।
केते सौदा कर गये, पंसारी की हाट ।। ३ ।।
दादू दावा आदि का, निरदावा कैसा ।
दिल की दुरमत दूर कर, सौदा कर ऐसा ।। ४ ।।
नहीं तहाँ से सब हुआ, फिर नाहीं हो जाय ।
दादू नाहीं हो रहा, साहब से लौ लाय ।। ५ ।।
उपजे बिनसे गुन धरे, यह माया का रूप ।
दादू देखत थिर नहीं, छिन छाया छिन धूप ।। ६ ।।
बिपति भली गुरु संग में, काया कसौटी दुक्ख ।
नाम बिना किस काम के, दादू सम्पत्ति सुक्ख ।। ७ ।।
क्या मुख ले हँस बोलिये, दादू दीजे रोय ।
जनम अमोलक आपना, चले अकारथ खोय ।। ८ ।।

।। चरनदास जी के दोहे।।

सतगुरु के ढिंग जाय के, सन्मुख खावे चोट ।
चकमक लग पथरी झड़े, सकल जलावे खोट ।। १ ।।
मैं मिरगा गुरु पारधी, शब्द लगाया बान ।
चरनदास घायल गिरे, तन मन बेधे प्रान ।। २ ।।
सतगुरु शब्दी तीर है, तन मन को यो छेद ।
बे दरदी समझे नहीं, विरही पावे भेद ।। ३ ।।
सतगुरू शब्दी बान है, अँग अँग डाला तोड़ ।
प्रेम खेत घायल गिरे, टांका लगै न जोड़ ।। ४ ।।
प्रेम बराबर जोग नहीं, प्रेम बराबर ज्ञान ।
प्रेम भक्ति बिन साधवा, सब ही थोथा ध्यान ।। ५ ।।

गद गद बानी कंठ में, आँसू टपके नैन ।
वह तो विरहिन पीव की, तड़पत है दिन रैन ।। ६ ।।
हाय हाय पति कब मिलें, छाती फाटी जाय ।
ऐसा दिन कब होयगा, दर्शन करूँ अघाय ।। ७ ।।
बिन दरशन कल ना पड़े, मनुआँ धरत न धीर ।
चरनदास गुरू चरन बिन, कौन मिटावे पीर ।। ८ ।।
आह जो निकसे दुख भरी, गहिरे लेत उसास ।
मुख पीरो सूखे अधर, आँखें खरी उदास ।। ९ ।।
अगिन बरे हियारा जरे, भये कलेजे छेद ।
विरहिन तो बौरी भई, क्या कोइ जाने भेद ।। १० ।।
पिया चहो कै मत चहो, मैं तो पिया को दास ।
पिया रंग राती रहूँ, जग से रहत उदास ।। ११ ।।
ज्यों सेमर का सूवना, ज्यों लोभी का धर्म ।
अन्न बिना भुस कूटना, नाम बिना यों कर्म ।। १२ ।।
हाथी घोड़े धन धना, चन्द्रमुखी बहु नार ।
नाम बिना जमलोक में, पावत दुक्ख अपार ।। १३ ।।
आज्ञाकारी पीव की, रहे पिया के संग ।
तन मन से सेवा करे, और न दूजा रंग ।। १४ ।।
पति की ओर निहारिये, औरन से क्या काम ।
सभी देवता छोड़ कर, जपिये गुरु का नाम ।। १५ ।।
मोह महा दुख रूप है, ताको मार निकार ।
प्रीत जगत की छोड़ दे, तब होवे निरवार ।। १६ ।।
इन्द्रिन के बस मन रहे, मन में बस रहे बुद्धि ।
कहो ध्यान कैसे लगे, ऐसा जहाँ विरुद्ध ।। १७ ।।

।। सहजो बाई के दोहे।।

धनवन्ते दुखिया सभी, निरधन दुख का रूप ।
साध सुखी सहजो कहे, पायो भेद अनूप ।। १ ।।
ना सुख विद्या के पढ़े, ना सुख वाद विवाद ।
साध सुखी सहजो कहे, लागी सुन्न समाध ।। २ ।।
जैसे सँडसी लोह की, छिन पानी छिन आग ।
तैसे दुख सुख जक्त के, सहजो तू तज भाग ।। ३ ।।
सहजो जग में यों रहे, ज्यों जिह्वा मुख माहिं ।
घीव घना भक्षन करे, तौ भी चिकनी नाहिं ।। ४ ।।
चलना है रहना नहीं, चलना बिस्वाबीस ।
सहजो तनिक सुहाग पर, कहा गुंधावे सीस ।। ५ ।।
सहजो गुरू परताप से, ऐसी जान पड़ी ।
नहीं भरोसा स्वाँस का, आगे मौत खड़ी ।। ६ ।।
ज्यों तिरिया पीहर बसे, सुरत रहे पिव माहिं ।
ऐसे जन जग में रहें, गुरू को भूलो नाहिं ।। ७ ।।
पहिले बुरा कमाय कर, बाँधी विष की पोट ।
कोटि करम पल में कटे, जब आये गुरु ओट ।। ८ ।।

राधास्वामी दयाल की दया राधास्वामी सहाय

पोथी

संत संग्रह भाग दूसरा

जिसको कि

परम सन्त सतगुरु हुज़ूर महाराज ने चन्द ग्रन्थों में से मुन्तख़िब फ़रमाया और जो बइजाज़त राधास्वामी ट्रस्ट के छापी गई ।

बीसवीं बार } २००६ { २००० प्रतियाँ

प्रकाशक
राधास्वामी ट्रस्ट, स्वामीबाग, आगरा

मुद्रक
गीतांजली प्रेस प्रा. लि., घाट रोड, नागपूर

संत संग्रह भाग दूसरा

सूचीपत्र

राधास्वामी दयाल की दया राधास्वामी सहाय

संत संग्रह भाग दूसरा

हुज़ूर राधास्वामी साहब के शब्द

।। शब्द पहिला ।।

करो री कोई सतसंग आज बनाय ।। टेक ।।
नर देही तुम दुर्लभ पाई, अस औसर फिर मिले न आय।। १ ।।
तिरिया सुत धन धाम बड़ाई, यह सुख फिर दुख मूल दिखाय।। २ ।।
यासे बचो गहो गुरु सरना, सतसंग में तुम बैठो जाय।। ३ ।।
यह सब खेल रैन का सुपना, मैं तुमको अब दिया जगाय।। ४ ।।
झूठी काया झूठी माया, झूठा मन जो रहा लुभाय।। ५ ।।
सतसंग सच्चा सतगुरु सच्चा, नाम सचाई क्या कहुँ गाय।। ६ ।।
मान बचन मेरा तू सजनी, जन्म मरन तेरा छुट जाय।। ७ ।।
नभ चढ़ चलो शब्द में पेलो, राधास्वामी कहत बुझाय।। ८ ।।

।। शब्द दूसरा ।।

क्यों फिरत भुलानी जक्त में, दिन चार बसेरा।। १ ।।
स्वारथ के संगी सभी, जिन तुझ को घेरा।। २ ।।
मात पिता सुत इस्तरी, कोइ संग न हेरा।। ३ ।।
बिन गुरु सतगुरु कौन है, जो करे निबेड़ा।। ४ ।।
नाम बिना सब जीव, करें चौरासी फेरा।। ५ ।।
मन दुलहा गगना चढ़े, सज सूरत सेहरा।। ६ ।।
धुन दुलहिन को पाय कर, बसे जाय त्रिकुटी देहरा।। ७ ।।
राधास्वामी ध्यान धर, तू साँझ सबेरा।। ८ ।।

।। शब्द तीसरा ।।

जग में घोर अँधेरा भारी, तन में तम का भंडारा।। १ ।।
स्वप्न जागरत दोनों देखी, भूल भुलइयाँ धर मारा।। २ ।।
जीव अजान भया परदेसी, देश बिसर गया निज सारा।। ३ ।।
फिरे भटकता खान खान में, जोनि जोनि बिच झख मारा।। ४ ।।
दम दम दुखी कष्ट बहु भोगे, सुने कौन अब बहु हारा।। ५ ।।

करे पुकार कारगर नाहीं, पड़े नर्क में जम धारा।। ६ ।।
भटक भटक नर देही पाई, इन्द्री मन मिल यहाँ मारा।। ७ ।।
सतगुरु संत कहें बहुतेरा, राह बतावें दस द्वारा।। ८ ।।
बचन न माने कहन न पकड़े, फिर २ भरमे नौ वारा।। ९ ।।
फोकट धर्म पकड़ कर जूझे, बूझे न शब्द जुगत पारा।। १० ।।
पानी मथे हाथ कछु नाहीं, क्षीर मथन आलस भारा।। ११ ।।
जीव अभाग कहूँ मैं क्या क्या, बाहर भरमे भौजारा।। १२ ।।
अंतरमुख जो शब्द कमाई, तामें मन को नहिं गारा।। १३ ।।
वेद शास्त्र स्मृति और पुराना, पढ़ पढ़ सब पंडित हारा।। १४ ।।
बिन सतगरु और बिना शब्द सुर्त, कोइ न उतरे भौ पारा।। १५ ।।
यही बात भाषी मैं चुनकर, अब तो मानो गुरु प्यारा।। १६ ।।
राधास्वामी कहा बुझाई, सुरत चढ़ावो नभ द्वारा।। १७ ।।

।। शब्द चौथा ।।

चेत चलो यह सब जंजाल, काम न आवे कुछ धन माल।। १ ।।
गुरु चरन गहो लो नाम सम्हाल,सतसंग करोधरो अब ख़्याल।। २ ।।
काम क्रोध संग मन पामाल, भर्म भुलाना कर्मन नाल।। ३ ।।
कहा कहूँ यह मन का हाल, रोग सोग संग होत बेहाल।। ४ ।।
जीव गिरासे जम और काल, देखत जग में यह दुख साल।। ५ ।।
तौ भी चेत न पकड़े ढाल, छिन छिन मारे काल कराल।। ६ ।।
राधास्वामी गुरु जब होय दयाल, चरन सरन दे करें निहाल।। ७ ।।

।। शब्द पाँचवाँ ।।

लाज जग काज बिगाड़ा री, मोह जग फंदा डारा री।। १ ।।
कुटँब की यारी ख़्वारी री, काल संग ब्याही क्वारी री।। २ ।।
कर्म ने फाँसी डारी री, करे जग हाँसी भारी री।। ३ ।।
मरन की सुद्ध बिसारी री, देह अब लागी प्यारी री।। ४ ।।
मान में खप गई सारी री, पोट सिर भारी धारी री।। ५ ।।
जीत कर बाजी हारी री, चाह जग की नहिं मारी री।। ६ ।।
राधास्वामी कहत पुकारी री, करो कोइ जतन बिचारी री।। ७ ।।
गुरू संग करो सुधारी री, नाम रस पियो अपारी री।। ८ ।।

॥ शब्द छठवाँ ॥

मुसाफ़िर रहना तुम हुशियार, ठगों ने आन बिछाया जार।। १ ।।
अकेले मत जाना इस राह, गुरू बिन नहिं होगा निरबाह।। २ ।।
जमा सब लेंगे तेरी छीन, करेंगे तुझ को अपना दीन।। ३ ।।
ठगों ने रोका सब संसार, गुरू बिन पड़ गई सब पर धाड़।। ४ ।।
मान लो कहना मेरा यार, संग इन तजना पकड़ किनार।। ५ ।।
गुरू बिन और न कोइ रखवार, कहूँ मैं तुम से बारम्बार।। ६ ।।
होयगी मंजिल तेरी पार, गुरू से कर ले दृढ़ कर प्यार।। ७ ।।
गुरू के चरन पकड़ यह सार, इंद्री भोग भुलावत झाड़।। ८ ।।
यही हैं ठगिया करत ठगार, कहें राधास्वामी तोहि पुकार।। ९ ।।
सरन में आजा लेउँ सम्हार, नाम संग होजा होत उधार ।। १० ।।

॥ शब्द सातवाँ ॥

मित्र तेरा कोई नहीं सगियन में, पड़ा क्यों सोवे इन ठगियन में।। १ ।।
चेत कर प्रीत करो सतसंग में, गुरू फिर रंग दें नाम अरंग म।। २ ।।
धन संपत तेरे काम न आवे, छोड़ चलो याहि छिन में।। ३ ।।
आगे रैन अँधेरी भारी, काज करो कुछ दिन में।। ४ ।।
यह देही फिर हाथ न आवे, फिरो चौरासी बन में।। ५ ।।
गुरु सेवा कर गुरू रिझाओ, आओ तुम इस ढँग में।। ६ ।।
गुरु बिन तेरा और न कोई, धार बचन यह मन में।। ७ ।।
जक्त जाल में फँसो न भाई, निस दिन रहो भजन में।। ८ ।।
साध गुरू का कहना मानो, रहो उदास जगत में।। ९ ।।
छल बल छोड़ो और चतुराई, क्यों तुम पड़ो कुगति में।।१०।।
सुमिरन करो गुरू को सेवो, चल रहो आज गगन में।।११।।
कल की ख़बर काल फिर लेगा, वहाँ तुम जलो अगिन में।।१२।।
अब ही समझ देर मत करियो, ना जानूँ क्या होय इस पन में।।१३।।
यों समझाय कहें राधास्वामी, मानो एक बचन में।।१४।।

* * * * *

।। शब्द आठवाँ ।।

मौत से डरत रहो दिन रात।।टेक।।

इक दिन भारी भीड़ पड़ेगी, जम खूँदेंगे धर धर लात।। १ ।।
वा दिन की तुम याद बिसारी, अब भोगन में रहो भुलात।। २ ।।
इक दिन काठी बने तुम्हारी, चार कहरवा लादे जात।। ३ ।।
भाई बंद कुटँब परिवारा, सो सब पीछे भागे जात।। ४ ।।
आगे मरघट जाय उतारा, तिरिया रोवे बिखेरे लाट।। ५ ।।
वहाँ जमपुर में नर्क निवासा, यहाँ अग्नी में फूँके जात।। ६ ।।
दोनों दीन बिगाड़े अपने, अब नहिं सुनता सतगुरु बात।। ७ ।।
वा दिन बहु पछतावा होगा, अब तुम करते अपनी घात।। ८ ।।
ज्वानी गई बृद्धता आई, अब कै दिन का इन का साथ।। ९ ।।
चेत करो मानो यह कहना, गुरु के चरन झुकाओ माथ।। १०।।
राधास्वामी कहत सुनाई, अब तुमको बहु बिधि समझात।। ११।।

।। शब्द नवाँ ।।

बँधे तुम गाढ़े बंधन आन ।।टेक ।।

पहिले बंधन पड़ा देह का, दूसर तिरिया जान।। १ ।।
तीसर बन्धन पुत्र बिचारो, चौथा नाती मान।। २ ।।
नाती के कहिं नाती होवे, फिर कहो कौन ठिकान।। ३ ।।
धन सम्पति और हाट हवेली, यह बंधन क्या करूँ बखान।। ४ ।।
चौलड़ पचलड़ सतलड़ रसरी, बाँध लिया अब बहु बिधि तान।। ५ ।।
कैसे छूटन होय तुम्हारा, गहरे खूँटे गड़े निदान।। ६ ।।
मरे बिना तुम छूटो नाहीं, जीते जी तुम सुनो न कान।। ७ ।।
जगत लाज और कुल मरजादा, यह बंधन सब ऊपर ठान।। ८ ।।
लीक पुरानी कभी न छोड़ो, जो छोड़ो तो जग की हान।। ९ ।।
क्या क्या कहूँ बिपत मैं तुम्हरी, भटको जोनी भूत मसान।। १० ।।
तुम तो जगत सत्य कर पकड़ा, क्योंकर पावो नाम निशान।। ११ ।।
बेड़ी तोक हथकड़ी बाँधे, काल कोठरी कष्ट समान।। १२ ।।
काल दुष्ट तुम बहु बिधि बाँधा, तुम खुश होके रहो ग़लतान।। १३ ।।
ऐसे मूरख दुख सुख जाना, क्या कहुँ अजब सुजान।। १४ ।।

शरम करो कुछ लज्जा ठानो, नहिं जमपुर का भोगो डान।। १५ ।।
राधास्वामी सरन गहो अब, तो कुछ पाओ उनसे दान।। १६ ।।

।। शब्द दसवाँ ।।

तजो मन यह दुख सुख का धाम।
लगो तुम चढ़कर अब सतनाम।। १ ।।
दिना चार तन संग बसेरा, फिर छूटे यह ग्राम।। २ ।।
धन दारा सुत नाती कहियन, यह नहिं आवें काम।। ३ ।।
स्वाँस दुधारा नित ही जारी, इक दिन ख़ाली चाम।। ४ ।।
मशक समान जान यह देही, बहती आठों जाम।। ५ ।।
तू अचेत ग़ाफ़िल हो रहता, सुने न मूल कलाम।। ६ ।।
माया नारि पड़ी तेरे पीछे, क्यों नहिं छोड़त काम।। ७ ।।
बिन गुरु दया छुटो नहिं यासे, भजो गुरू का नाम।। ८ ।।
गुरु का ध्यान धरो हिरदे में, मन को राखो थाम।। ९ ।।
वे दयाल तेरी दया बिचारें, दम दम करें सहाम।।१० ।।
छोड़ भोग क्यों रोग बिसावे, यामें नहिं आराम।। ११ ।।
गुरु का कहना मान पियारे, तो पावे बिसराम।। १२ ।।
दुख तेरा सब दूर करेंगे, देंगे अचल मुक़ाम।। १३ ।।
राधास्वामी कहत सुनाई, खोज करो निज नाम।। १४ ।।

।। शब्द ग्यारहवाँ ।।

देखो सब जग जात बहा ।।टेक।।
देख देख मैं गति या जग की, बार बार यों बरन कहा।। १ ।।
चारों जुग चौरासी भोगी, अति दुख पाया नरक रहा।। २ ।।
जन्म जन्म दुख पावत बीते, इक छिन कहीं न चैन लहा।। ३ ।।
पाप पुन्न बस बिपता भोगी, नहिं सतगुरु का चरन गहा।। ४ ।।
अब यह देह मिली किरपा से, करो भक्ति जो कर्म दहा।। ५ ।।
अब की चूक माफ़ नहिं होगी, नाना बिधि के कष्ट सहा।। ६ ।।
ग़फ़लत छोड़ भुलाओ जग को, नाम अमल अब घोट पिया।। ७ ।।
मन से डरो, करो गुरू सेवा, राधास्वामी भेद दिया।। ८ ।।

* * * * *

।। शब्द बारहवाँ ।।

कोइ मानो रे कहन हमारी ।। टेक ।।

जो जो कहूँ सुनो चित दे कर, गौं की कहूँ तुम्हारी।। १ ।।
जग के बीच बँधे तुम ऐसे, जैसे सुवना नलनी धारी।। २ ।।
मरकट सम तुम हुए अनाड़ी, मुट्ठी दीन फँसा री।। ३ ।।
और मीना जिव्हा रस माती, काँटा जिगर छिदा री।। ४ ।।
गज सम मूरख हुए इस बन में, झूठी हथनी देख बँधा री।। ५ ।।
क्या क्या कहूँ काल अन्याई, बहु बिधि तुमको फाँस लिया री।। ६ ।।
तुम अनजान मरम नहिं जाना, छलबल कर इन फाँस लिया री।। ७ ।।
छूटन की बिधि नेक न मानो, क्योंकर छूटन होय तुम्हारी।। ८ ।।
सतगुरु संत हुए उपकारी, उनका संग करो न सम्हारी।। ९ ।।
वे दयाल अस जुगत लखावें, कर दें तुम छुटकारी।। १० ।।
पाँच तत्त गुन तीन जेवरी, काटें पलपल बंधन भारी।। ११ ।।
उनकी संगत करो भर्म तज, पाओ तुम गति न्यारी।। १२ ।।
जक्त जाल सब धोखा जानो, मन मूरख सँग कीन्ही यारी।। १३ ।।
इसका संग तजो तुम छिन छिन,नहिं यह लेगा जान तुम्हारी।। १४ ।।
अपने घर से दूर पड़ोगे, चौरासी के धक्के खा री।। १५ ।।
बड़ी कुगत में जाय पड़ोगे, वहाँ से तुमको कौन निकारी।। १६ ।।
ताते अब ही कहना मानो, राधास्वामी कहत बिचारी।। १७ ।।

।। शब्द तेरहवाँ ।।

अटक तू क्यों रहा जग में, भटक में क्या मिले भाई।। १ ।।
खटक तू धार अब मन में, खोज सतसंग में जाई।। २ ।।
बिरह की आग जब भड़के, दूर कर जक्त की काई।। ३ ।।
लगा लो लगन सतगुरू से, मिले फिर शब्द लौ लाई।। ४ ।।
छुटेगा जन्म और मरना, अमर पद जाय तू पाई।। ५ ।।
भाग तेरा जगे सोता, नाम और धाम मिल जाई।। ६ ।।
कहूँ क्या काल जग मारा, जीव सब घेर भरमाई।। ७ ।।
नहीं कोइ मौत से डरता, खौफ़ जम का नहीं लाई।। ८ ।।
पड़े सब मोह की फाँसी, लोभ ने मार धर खाई।। ९ ।।
चेत कहो होय अब कैसे, गुरू के संग नहिं धाई।। १० ।।

काम और क्रोध बिच बिच में, जीव से भाड़ झुकवाई।। ११ ।।
गुरू बिन कोइ नहीं अपना, जाल यह कौन तुड़वाई।। १२ ।।
कुटंब परिवार मतलब का, बिना धन पास नहिं आई।। १३ ।।
कहाँ लग कहूँ इस मन को, उन्हीं से मास नुचवाई।। १४ ।।
गुरू और साध कहें बहु बिधि, कहन उनकी न पतियाई।। १५ ।।
मेहर बिन क्या कोई माने, कही राधास्वामी यह गाई।। १६ ।।

।। शब्द चौदहवाँ ।।

मिली नर देह यह तुमको, बनाओ काज कुछ अपना।। १ ।।
पचो मत आय इस जग में, जानियो रैन का सुपना।। २ ।।
देह और ग्रेह सब झूठा, भर्म में काहे को खपना।। ३ ।।
जीव सब लोभ में भूले, काल से कोई नहीं बचना।। ४ ।।
तिरिश्ना अगिन जग जारा, पड़ा सब जीव को तपना।। ५ ।।
नहीं कोई राह बचने की, जलें सब नर्क की अगिना।। ६ ।।
जलेंगे आग में निस दिन, बहुर भोगें जनम मरना।। ७ ।।
भटकते वे फिरें खानी, नहीं कुछ ठीक उन लगना।। ८ ।।
कहूँ क्या दुक्ख वह भोगें, कहन में आ नहीं सकना।। ९ ।।
दया कर संत और सतगरु, बतावें नाम का जपना।। १० ।।
न माने जुक्ति यह उनकी, सुरत और शब्द का गहना।। ११ ।।
बिना सतगुरु बिना करनी, छुटे नहिं खान का फिरना।। १२ ।।
कहाँ लग मैं कहूँ उन को, कोई नहिं मानता कहना।। १३ ।।
हुए मनमुख फिरें दुख में, बचन गुरु का नहीं माना।। १४ ।।
पुजावें आप को जग में, गुरू की सेव नहिं करना।। १५ ।।
फ़िकर नहिं जीव का अपने, पड़ेगा नर्क में फुकना।। १६ ।।
समझ कर धार लो मन में,कहें राधास्वामी निज बचना।। १७ ।।

।। शब्द पन्द्रहवाँ ।।

यहाँ तुम समझ सोच कर चलना ।।टेक।।
यह तो राह बड़ी अति टेढ़ी, मन के साथ न पड़ना।। १ ।।
भौजल धार बहे अति गहरी, बिन गुरु कैसे पार उतरना।। २ ।।
गुरु से प्रीत करो तुम ऐसी, जस कामी कामिन सँग धरना।। ३ ।।

संग करो चेटक चित राखो, मन से गुरु के चरन पकड़ना।। ४ ।।
छल बल कपट छोड़ कर बरतो, गुरु के बचन समझना।। ५ ।।
डरते रहो काल के भय से, ख़बर नहीं कब मरना।। ६ ।।
स्वाँसो स्वाँस होश कर बौरे, पल पल नाम सुमिरना।। ७ ।।
यहाँ की ग़फ़लत बहुत सतावे, फिर आगे कुछ नहीं बन पड़ना।। ८ ।।
जो कुछ बने सो अभी बनाओ, फिर का कुछ न भरोसा धरना।। ९ ।।
जग सुख की कुछ चाह न राखो, दुख में इसके दुखी न रहना।।१०।।
दुख की घड़ी ग़नीमत जानो, नाम गुरू का छिन २ भजना।। ११ ।।
सुख में ग़ाफ़िल रहत सदा नर, मन तरंग में दम दम बहना।।१२ ।।
ताते चेत करो सतसंगत, दुख सुख नदिया पार उतरना।। १३ ।।
अपना रूप लखो घट भीतर, फिर आगे को सूरत भरना।। १४ ।।
राधास्वामी कहें बुझाई, शब्द गुरू से जाकर मिलना।। १५ ।।

।। शब्द सोलहवाँ ।।

मन रे क्यों गुमान अब करना ।। टेक ।।

तन तो तेरा ख़ाक मिलेगा, चौरासी जा पड़ना।। १ ।।
दीन ग़रीबी चित में धरना, काम क्रोध से बचना।। २ ।।
प्रीत प्रतीत गुरू की करना, नाम रसायन घट में जरना।। ३ ।।
मन मलीन के कहे न चलना, गुरु का बचन हिये बिच रखना।। ४ ।।
यह मतिमन्द गहे नहिं सरना, लोभ बढ़ाय उद्र को भरना।। ५ ।।
तुम मानो मत इसका कहना, इसके संग जक्त बिच गिरना।। ६ ।।
इस मूरख को समझ पकड़ना, गुरु के चरन कभी न बिसरना।। ७ ।।
गुरु का रूप नैन में धरना, सुरत शब्द से नभ पर चढ़ना।। ८ ।।
राधास्वामी नाम सुमिरना, जो वह कहें चित्त में धरना।। ९ ।।

।। शब्द सतरहवाँ ।।

जक्त से चेतन किस बिधि होय, मोह ने बाँध लिया अब मोहिं।। १ ।।
बेड़ियाँ भारी पड़ती जायँ, फाँसियाँ करड़ी लागी आयँ।। २ ।।
जाल अब चोड़े बिछ गये आय, चाट अब सुख की कुछ २ पाय।। ३ ।।
दुक्ख अब पीछे होगा आय, ख़बर नहिं उसकी कौन बताय।। ४ ।।
पड़ेगी भारी इक दिन भीड़, सहेगा नाना बिधि की पीड़।। ५ ।।

करेगा पछतावा जब बहुत, अभी तो सुनता नहिं दिन खोत।। ६ ।।
याद नहिं लाता अपनी मौत,रात दिन ग़फ़लत में पड़ा सोत।। ७ ।।
कहे में मन के चलता बहुत, भरे है दिन भर जग का पोत।। ८ ।।
रात को सोता खाट बिछाय, होश नहिं कल को क्या हो जाय।। ९ ।।
काल ने मारा कर कर ज़ेर, कर्म ने ख़ूँदा धर धर पैर।। १० ।।
तमोगुन छाय गया घट माहिं, ख़बर सब भूल गया यहाँ आय।। ११ ।।
सन्त ओर सतगुरु रहे चिताय, बचन उन मन में नहीं समाय।। १२ ।।
भजन ओर सुमिरन दिया बिसराय, प्रीत भी उन चरनन नहिं लाय।। १३ ।।
कहो कस छूटे जम की घात, भोग ओर सोग लगे दिन रात।। १४ ।।
गुरू बिन कौन छुड़ावे ताय, हुआ यह कै़दी बहु बिधि आय।। १५ ।।
बिना सतसंग और बिन नाम, न पावै कबही अपना धाम।। १६ ।।
कही राधास्वामी यह गति गाय, सरन ले सन्त की तू जाय।। १७ ।।

।। शब्द अठारहवाँ ।।

कुमतिया वैरन पीछे पड़ी, मैं कैसे हटाऊँ जान।। १ ।।
सतगुरू बचन न माने कबही, उन सँग धरे गुमान।। २ ।।
काम क्रोध की सनी बुद्धि से, परखा चाहे उनका ज्ञान।। ३ ।।
सेवा करे न सरधा लावे, उलट करावे उन से मान।। ४ ।।
अपनी गति हालत नहिं बूझे, कैसे लगे ठिकान।। ५ ।।
लोभ मोह की सूखी नदियाँ, तामें निस दिन रहे भरमान।। ६ ।।
संतमता कहो कैसे बूझे, अपनी मति के दे परमान।। ७ ।।
तिन से संत मौन होय बैठे, सो जिव करते अपनी हान।। ८ ।।
कुमति अधीन हुए सब प्रानी, क्या २ उनका करूँ बखान।। ९ ।।
जिन पर मेहर पड़े आ सरना, वह पावें सतगुरु पहिचान।। १० ।।
अपनी उक्ति चतुरता छोड़ें, अपने को जानें अनजान।। ११ ।।
तब सतगुरु परसन्न होय कर, देवें पता निशान।। १२ ।।
कुमति हटाय छुड़ावें पीछा, सुरत लगावें शब्द धियान।। १३ ।।
बिना शब्द उद्धार न होगा, सब संतन यह किया बखान।। १४ ।।
सोई गावें राधास्वामी, जो कोइ माने सोई सुजान।। १५ ।।

* * * * *

॥ शब्द उन्नीसवाँ ॥

सोता मन कस जागे भाई, सो उपाव मैं करूँ बखान॥ १ ॥
तीरथ करे बर्त भी राखे, बिद्या पढ़ के हुए सुजान॥ २ ॥
जप तप संजम बहु बिधि धारे, मौनी हुए निदान॥ ३ ॥
अस उपाव हम बहुतक कीन्हे, तो भी यह मन जगा न आन॥ ४ ॥
खोजत खोजत सतगुरु पाये, उन यह जुक्ति कही परमान॥ ५ ॥
सतसंग करो संत को सेवो, तन मन करो कुरबान॥ ६ ॥
सतगुरु शब्द सुनो गगना चढ़, चेत लगाओ अपना ध्यान॥ ७ ॥
जागत जागत अब मन जागा, झूठा लगा जहान॥ ८ ॥
मन की मदद मिली सूरत को, दोनों अपने महल समान॥ ९ ॥
बिना शब्द यह मन नहिं जागे, करो चाहे कोइ अनेक बिधान॥ १० ॥
यही उपाव छाँट कर गाया, और उपाव न कर परमान॥ ११ ॥
बिरथा बैस बितावें अपनी, लगे न कभी ठिकान॥ १२ ॥
संत बिना सब भटकें डोलें, बिना संत नहिं शब्द पिछान॥ १३ ॥
शब्द शब्द मैं शब्दहि गाऊँ, तू भी सुरत लगा दे तान॥ १४ ॥
घर पावे चौरासी छूटे, जनम मरन की होवे हान॥ १५ ॥
राधास्वामी कहें बुझाई, बिना संत सब भटके खान॥ १६ ॥

॥ शब्द बीसवाँ ॥

यह तन दुर्लभ तुमने पाया, कोटि जनम भटका जब खाया॥ १ ॥
अब याको बिरथा मत खोओ, चेतो छिन छिन भक्ति कमाओ॥ २ ॥
भक्ति करो तो गुरु की करना, मारग शब्द गुरू से लेना॥ ३ ॥
शब्द मारगी गुरू न होवे, तो झूठी गुरुवाई लेवे॥ ४ ॥
गुरू सोई जो शब्द सनेही, शब्द बिना दूसर नहिं सेई॥ ५ ॥
शब्द कहा मैं गगन शिखर का, शब्द कहा मैं सुन्न शहर का॥ ६ ॥
शब्द कहा मैं भँवर डगर का, शब्द कहा मैं अगम नगर का॥ ७ ॥
गुरु पहिचान ख़ूब में गाई, धोखा या में कुछ न रहाई॥ ८ ॥
शब्द कमावे सो गुरु पूरा, उन चरनन की हो जा धूरा॥ ९ ॥
और पहिचान करो मत कोई, लक्ष अलक्ष न देखो सोई॥ १० ॥
शब्द भेद लेकर तुम उनसे, शब्द कमाओ तुम तन मन से॥ ११ ॥

अपने जीव की कुछ दया पालो, चौरासी का फेर बचालो।। १२ ।।
नहिं नर्कन में अति दुख पैहो, अग्निकुण्ड में छिन २ दहिहो।। १३ ।।
यह सुख चार दिनों का भाई, फिर दुख सदा होय दुखदाई।। १४ ।।
बार बार मैं कहूँ चिताई, दया तुम्हारी मोहिं सताई।। १५ ।।
मेरे मन करुना अस आई, चेतो तुम गुरु होयँ सहाई।। १६ ।।
बिन गुरु और न पूजो कोई, दर्शन कर गुरु पद नित सेई।। १७ ।।
गुरु पूजा में सब की पूजा, जस समुद्र सब नदी समाजा।। १८ ।।
देवी देवा ईश महेशा, सूरज शेष ओर गौर गनेशा।। १९ ।।
ब्रह्म ओर पारब्रह्म सतनामा, तीन लोक और चौथा धामा।। २० ।।
गुरु सेवा में सब की सेवा, रंचक भर्म न मानो भेवा।। २१ ।।
ताते बार बार समझाऊँ, गुरु की भक्ती छिन २ गाऊँ।। २२ ।।
गुरुमुख होय गुरु आज्ञा बरते, गुरु बरती इक छिन में तरते।। २३ ।।
गुरु महिमा मैं कहाँ लग गाऊँ, गुरु समान कोइ ओर न पाऊँ।। २४ ।।
गुरु अस्तुत है सब मत माहीं, गुरु से बेमुख ठौर न पाहीं।। २५ ।।
भोग बिलास हुकूमत जग की, धन ओर हाकिम के बस रहती।। २६ ।।
हाकिम सेवा तुम कस करते, धन और मान बड़ाई लेते।। २७ ।।
आज्ञा उसकी अस सिर धरते, खानपान निद्रा भी तजते।। २८ ।।
सो धन जोड़ किया क्या भाई, जक्त लाज में दिया उड़ाई।। २९ ।।
सो जग की गति पहिले भाखी, चार दिना फिर है नहिं बाक़ी।। ३० ।।
सो धन कारन हाकिम सेवा, ऐसी करते क्या कहुँ भेवा।। ३१ ।।
गुरु सेवा जो सदा सहाई, ता को ऐसी पीठ दिखाई।। ३२ ।।
दिन नहिं पक्ष मास नहिं बरसा, कभी न दर्शन को मन तरसा।। ३३ ।।
कहो कैसे तुम्हारा उद्धारा, नर्क निवास दुक्ख चौधारा।। ३४ ।।
उस दुख में कहो कौन सहाई, गुरु से प्रीत न करी बनाई।। ३५ ।।
जो इसकी परतीत न लाओ, तो मन अपना यों समझाओ।। ३६ ।।
रोग दुक्ख नित प्रती सताई, मौत पियादे हैं यह भाई ।। ३७ ।।
मृत्यु होन में नहिं कुछ संसा, वह तो करे सकल जिव हिंसा।। ३८ ।।
यह हिंसा तुम पर भी आवे, इस दिन काल सीस पर धावे।। ३९ ।।
उस दिन का कुछ करो उपाई, धन हाकिम कुछ काम न आइ।। ४० ।।

पर जो समझवार तुम होते, तो धन से कुछ कारज लेते।। ४१ ।।
कारज लेना यह है भाई, गुरु सेवा में ख़र्च कराई।। ४२ ।।
गुरु नहिं भूखा तेरे धन का, उन पै धन है भक्ति नाम का।। ४३ ।।
पर तेरा उपकार करावें, भूखे प्यासे को दिलवावें।। ४४ ।।
उनकी मेहर मुफ्त तू पावे, जो उनको परसन्न करावे।। ४५ ।।
उन का खुश होना है भारी, सत्तपुरूष निज किरपा धारी।। ४६ ।।
गुरु परसन्न होयँ जा ऊपर, वही जीव है सब के ऊपर।। ४७ ।।
गुरु राज़ी तो करता राज़ी, कर्म काल की चले न बाज़ी।। ४८ ।।
गुरु की आन सभी मिल मानें, सुकदेव नारद ब्यास बखानें।। ४९ ।।
ताते गुरु को लेव रिझाई, औरन रीझे कुछ न भलाई।। ५० ।।
गुरु परसन्न और सब रूठे, तो भी उसका रोम न टूटे।। ५१ ।।
औरन को परसन्न जो करता, गुरु रो द्रोह घात जो रखता।। ५२ ।।
गुरु की निंदा से नहिं डरता, गुरु को मानुष रूप समझता।। ५३ ।।
सो नरकी जानो अपघाती, उस संग दूत करें उतपाती।। ५४ ।।
या ते समझो बूझो भाई, गुरु को परसन्न करो बनाई।। ५५ ।।
कुल कुटंब कुछ काम न आई, और बिरादरि करे न सहाई।। ५६ ।।
यह तो चार दिना के संगी, इन निज स्वारथ में बुधि रंगी।। ५७ ।।
लज्जा डर इनका मत करो, गुरुभक्ती में अब चित धरो।। ५८ ।।
गुरु सहायता यहाँ वहाँ करें, उनसे करता भी कुछ डरे।। ५९ ।।
कुल कुटंब से कुछ नहिं सरे, इन के संग नर्क में पड़े।। ६० ।।
कार्य मात्र बरतो इन माहीं, बहुत मोह में बहु दुख पाई।। ६१ ।।
ताते सतसंग सतगुरु सेवो, नाम पदारथ दम दम लेवो।। ६२ ।।
गुरु समान ओर नाम समाना, तीसर सतसंग ओर न जाना।। ६३ ।।
इनसे सब कारज होयँ पूरे, कर्म काट पहुँचो घर मूरे।। ६४ ।।
यह कहना गेरा अब मानो, नहीं अन्त को पड़े पछतानो।। ६५ ।।
धन और मान काम नहिं आवे, हुकुम हाकिमी सभी नसावे।। ६६ ।।
ताते कुछ भक्ती कर लीजे, यह भी सुफल कमाई कीजे।। ६७ ।।

* * * * *

॥ शब्द इक्कीसवाँ ॥

नाम दान अब सतगुरु दीजे, काल सतावे स्वाँसा छीजे ॥ १ ॥
दुख पावत मैं निस दिन भारी, गही आय अब ओट तुम्हारी ॥ २ ॥
तुम समान कोइ ओर न दाता, मैं बालक तुम पितु ओर माता ॥ ३ ॥
मोको दुखी आप कस देखो, यह अचरज मोहिं होत परेखो ॥ ४ ॥
मैं हूँ पापी अधम बिकारी, भूला चूका छिन छिन भारी ॥ ५ ॥
अवगुन अपने कहाँ लग बरनूँ, मेरी बुधि समझे नहिं मरमूँ ॥ ६ ॥
तुम्हरी गति मति नेक न जानूँ, अपनी मति अनुसार बखानूँ ॥ ७ ॥
तुम समरथ ओर अंतरजामी, क्या क्या कहुँ म सतगुरु स्वामी ॥ ८ ॥
मौज करो दुख अंतर हरो, दया दृष्टि अब मोपर धरो ॥ ९ ॥
माँगूँ नाम न माँगूँ मान, जस जानो तस देव मोहिं दान ॥ १० ॥
मैं अति दीन भिखारी भूखा, प्रेम भाव नहिं सब बिधि रूखा ॥ ११ ॥
कैसे दोगे नाम अमोला, मैं अपने को बहु बिधि तोला ॥ १२ ॥
होय निरास सबर कर बैठा, पर मन धीरज धरे न नेका ॥ १३ ॥
शायद कभी मेहर हो जावे, तो कहुँ नाम नोक मिल जावे ॥ १४ ॥
बिना मेहर कोइ जतन न सूझे, बख़्शिश होय तभी कुछ बूझे ॥ १५ ॥
किनका नाम करे मेरा काज, हे सतगुरु मेरी तुमको लाज ॥ १६ ॥
अब तो मन कर चुका पुकार, राधास्वामी करो उधार ॥ १७ ॥

॥ शब्द बाईसवाँ ॥

नाम रस पीवो गुरु की दात, शब्द सँग भींजो मन कर हाथ ॥ १ ॥
चरन गुरु पकड़ो तन मन साथ, मान मद मारो आवे शांत ॥ २ ॥
परख कर समझो गुरु की बात, निरख कर चलियो माया घात ॥ ३ ॥
जक्त सब डूबा भोजल जात, नाम बिन छुटे न जम का नात ॥ ४ ॥
घाट घट उलटो दिन और रात, मोह की बाज़ी होगी मात ॥ ५ ॥
सुरत से करो शब्द बिख्यात, गगन चढ़ देखो जा साक्षात ॥ ६ ॥
मिटे फिर मन की सब उतपात, राधास्वामी परखी ओर परखात ॥ ७ ॥

॥ शब्द तेईसवाँ ॥

सुरत क्यों भूल रही, अब चेत चलो स्वामी पास ॥ १ ॥
हे मनुवाँ तुम सदा के संगी, त्यागो जगत की आस ॥ २ ॥

हे इन्द्रियन तुम भोग दिवानी, क्यों फँसो काल की फाँस।। ३ ।।
जल्दी से अब मुख को मोड़ो, अंतर अजब बिलास।। ४ ।।
जैसी बने तैसी करो कमाई, धर चरनन बिश्वास।। ५ ।।
राधास्वामी दीन दयाला, दे हैं अगम निवास।। ६ ।।
तब सुख साथ रहो घर अपने, फिर होय न तन में बास।। ७ ।।

।। शब्द चौबीसवाँ ।।

सखी री क्यों देर लगाई, चटक चढ़ो नभ द्वार।। १ ।।
इस नगरी में तिमिर समाना, भूल भरम हर बार।। २ ।।
खोज करो अन्तर उजियारी, छोड़ चलो नौ द्वार।। ३ ।।
सहस कँवल चढ़ त्रिकुटी धाओ, भँवरगुफा सतलोक निहार।। ४ ।।
अलख अगम के पार सिधारो, राधास्वामी चरन सम्हार।। ५ ।।

।। शब्द पच्चीसवाँ ।।

क्या सोवे जग में नींद भरी, उठ जागो जल्दी भोर भई।। १ ।।
पंथी सब उठ के राह लई, तू मंज़िल अपनी बिसर गई।। २ ।।
सतगुरु का खोज करो प्यारी, सँग उनके बाट चलो न्यारी।। ३ ।।
भौसागर है गहिरा भारी, गुरु बिन को जाय सके पारी।। ४ ।।
भक्ती की रीत सुनो प्यारी, गुरु चरनन प्रीत करो सारी।। ५ ।।
तज संशय भरम करम जारी, तब सुरत अधर घर पग धारी।। ६ ।।
चढ़ गगन शिखर तन मन वारी, धुन बीन सुनी सत पद न्यारी।। ७ ।।
फिर अलख अगम जा परसा री, राधास्वामी चरन पर बलिहारी।। ८।।

।। शब्द छब्बीसवाँ ।।

हे मेरे प्यारे सज्जन, जग भूल निकारो।। १ ।।
सतगुरु को खोजो जल्दी, सतनाम सम्हारो।। २ ।।
कुल कुटम्ब कोइ संगी नाहीं, धन संपत जारो।। ३ ।।
स्रुत अंश अकेली जावे, सब से होय न्यारो।। ४ ।।
यह देश तुम्हारा नाहीं, सुध घर की धारो।। ५ ।।
अब प्रीत करो सतगुरु से, तन मन धन वारो।। ६ ।।
चरनों में सुरत लगाओ, मद मोह काम सब टारो।। ७ ।।
गुरु समरथ दीन दयाला, तब देहें दान कर प्यारो।। ८ ।।

तेरी सुरत अधर चढ़ जावे, और पियो अमी रस सारो।। ९ ।।
राधास्वामी गुन नित गावो, तन मन से होकर न्यारो।। १० ।।

।। शब्द सत्ताईसवाँ।।

सतगुरु आय दिया जग हेला, जागो रे मेरे प्यारे जागो।। १ ।।
काल शिकारी मग में ठाढ़ा, भागो रे मेरे प्यारे भागो।। २ ।।
गुरु स्वरूप तेरे घट में बसता, झाँको रे मेरे प्यारे झाँको।। ३ ।।
मान मनी तज गुरु चरनन में, लागो रे मेरे प्यारे लागो।। ४ ।।
जगत भाव भोगन की आसा, त्यागो रे मेरे प्यारे त्यागो।। ५ ।।
नैन कँवल गुरु डगर पिया की, ताको रे मेरे प्यारे ताको।। ६ ।।
दृढ़ परतीत भरोस पिया का, राखो रे मेरे प्यारे राखो।। ७ ।।
राधास्वामी २ छिन २ हिय से, भाखो रे मेरे प्यारे भाखो।। ८ ।।

।। शब्द अट्ठाईसवाँ ।।

जग में पड़ा घोर अँधियारा, करम भरम का बड़ा पसारा।। १ ।।
भरमों में सब जीव भुलाने, विद्या पढ़ पढ़ हुए सयाने।। २ ।।
कृत्रिम पूजा उन सब धारी, निज घर की उन सुद्ध बिसारी।। ३ ।।
निज पद है राधास्वामी धामा, सत्तपुरुष सतलोक ठिकाना।। ४ ।।
संत आय यह भेद जनावें, करमी जीव प्रतीत न लावें।। ५ ।।
जब नहिं हते ब्रह्म और माया, बेद पुरान नहीं प्रगटाया।। ६ ।।
पाँचो तत्त न तिरगुन माया, मन इच्छा नहिं तिरबिधि काया।। ७ ।।
तब थे अकह अपार अनामी, परम पुरूष समरथ राधास्वामी।। ८ ।।
मौज उठी रचना हुइ भारी, अलख अगम सतलोक सँवारी।। ९ ।।
राधास्वामी अगम रूप धर आये, सत्तलोक सतपुरूष कहाये।। १० ।।
अंस दोय यहँ से उतपाने, ब्रह्म और माया नाम कहाने।। ११ ।।
यह दोउ अंस उतर कर आये, पाँच तत्त गुन तीन मिलाये।। १२ ।।
सत्तपुरूष की अज्ञा लीन्ही, तीन लोक रचना इन कीन्ही।। १३ ।।
जीव अंश सतपुर से आई, माया ब्रह्म माँग कर लाई।। १४ ।।
तन मन इन्द्री संग बँधाया, इच्छा भोगन माहिं फँसाया।। १५ ।।
परम पुरूष का भेद न पाया, करम धरम में बहु भटकाया।। १६ ।।
सब जिव यों भोगें चौरासी, जोत निरंजन डाली फाँसी।। १७ ।।
संत बचन माने जो कोई, फाँस काट जावे घर सोई।। १८ ।।

सुरत शब्द की कार कमाओ, सत्तलोक की आसा लाओ।। १९ ।।
सतसँग कर धारो परतीती, संत चरन की पालो प्रीती।। २० ।।
सतगुरु रूप निरख हिय अंतर, राधास्वामी नाम सुमिर जिय अंतर।।२१।।
मन ओर सुरत होयँ तब निरमल, शब्द २ पोड़ी चढ़ चल चल।। २२ ।।
चढ़ चढ़ पहुँचे सतगुरु देसा, काल करम का छूटे लेसा।। २३ ।।
मन माया सब वार रहाई, तीन लोक के पार न जाई।। २४ ।।
परलै महापरलै गत नाहीं, काल और महाकाल रहे ठाहीं।। २५ ।।
सत्तलोक वह देश अनूपा, सुरत धरे जहँ हंस स्वरूपा।। २६ ।।
दरस पुर्ष अरु अमीं अहारा, मलय सुगंध शब्द झनकारा।। २७ ।।
अस २ सूरत देख बिलासा, गई अधर किया निज पद बासा।। २८ ।।
निज पद है वह राधास्वामी, बार २ उन चरन नमामी।। २९ ।।
भाग आपना कहा सराहूँ, राधास्वामी महिमा क्योंकर गाऊँ।। ३० ।।
अब यह आरत पूरन कीनी, राधास्वामी चरनन रहूँ अधीनी।। ३१ ।।

।। शब्द उनतीसवाँ ।।

मेरे गुरू दयाल उदार की, गत मत नहीं कोइ जानता।
कासे कहूँ यह भेद मैं, चित से नहीं कोइ मानता।। १ ।।
जग में अँधेरा घोर है, माया का भारी शोर है।
काल और करम भरज़ोर है, भरमों में जिव भरमावता।। २ ।।
तीरथ बरत में भरमते, मंदिर में मूरत पूजते।
पोथी किताबें ढूँढ़ते, निज भेद नहिं कोइ पावता।। ३ ।।
कोइ मौन साधें जप करें, कोइ पंच अगिन धूनी तपें।
कोइ पाठ होम और जग करें, कोइ ब्रह्मज्ञान सुनावता।। ४ ।।
कोइ देवी देवा गावते, कोइ रामकृष्ण धियावते।
कोइ प्रेत भूत मनावते, कोइ गंगा जमुना न्हावता।। ५ ।।
कोइ दान पुन्य करावते, ब्रह्मन्न भेख खिलावते।
कोइ भजन गाय सुनावते, कोइ ध्यान मन में लावता।। ६ ।।
यह सब जो पिछली चाल ह, काल और करम के जाल हैं।
इन में पड़े बेहाल हैं, सब जीव धोखा खावता।। ७ ।।
जो चाहे तू उद्धार को, सच्चे गुरू को खोज ले।
कर प्रीत और परतीत तू , फिर चरन सरन समावता।। ८ ।।

राधास्वामी नाम सम्हार ले, गुरु रूप हिरदे धार ले।
स्रुत शब्द मारग सार ले, गुरु महिमा निस दिन गावता।। ९ ।।
सतसंग कर चित चेतकर, गुरु प्रीत कर हिय हेत कर।
मन काल मारो रेत कर, सुर्त शब्द माहिं लगावता।। १० ।।
गुरु तुझ पै मेहर दया करें, पल पल तेरी रक्षा करें।
मन उलट कर सीधा करें, फिर गगन माहीं धावता।। ११ ।।
नभ माहिं दर्शन जोत कर, त्रिकुटी चरन गुरु परस कर।
सुन माहिं सारँग साज कर, बेनी में जाय अन्हावता।। १२ ।।
व्हाँ से सुरत आगे चली, सोहंग मुरली धुन सुनी।
सतपुरुष के चरनन रली, धुन सार शब्द सुनावता।। १३ ।।
मन थाल लीन सजाय कर, और सुरत बाती बनाय कर।
फिर शब्द जोत जगाय कर, भर प्रेम आरत गावता।। १४ ।।
दृढ़ प्रीत बस्तर साज कर, और भाव भक्ती भोग धर।
मन चित से अज्ञा मान कर, प्यारे सतगुरु को रिझावता।। १५ ।।
फिर अलख अगम को धाइया, घर आदि अंत जो पाइया।
राधास्वामी चरन समाइया, धुर धाम संत कहावता।। १६ ।।
गुरु महिमा क्योंकर गाइया, राधास्वामी मेहर कराइया।
निज देश अपना पाइया, धन धन्य भाग सरावता।। १७ ।।

।। सावन ३० ।।

सावन मास मेघ घिरि आये, गरज २ धुन शब्द सुनाये।। १ ।।
रिमझिम बरषा होवत भारी, हिय बिच लागी बिरह कटारी।। २ ।।
प्रीतम छाय रहे परदेसा, बूझत रही नहिं मिला संदेसा।। ३ ।।
रैन दिवस रहुँ अति घबराती, कसक २ मेरी कसकै छाती।। ४ ।।
कासे कहूँ कोइ दरद न बूझे, बिन पिया दरस नहों कुछ सूझे।। ५ ।।
चमके बीज तड़प उठे भारी, कस पाऊँ पिय प्रान अधारी।। ६ ।।
रोवत बीते दिन और राती, दरद उठत हिय में बहु भाँती।। ७ ।।
ढूँढत २ बन बन डोली, तब राधास्वामी की सुन पाई बोली।। ८ ।।
प्रीतम प्यारे का दिया सँदेसा, शब्द पकड़ जाओ उस देसा।। ९ ।।
सुरत शब्द मारग दरसाया, मन और सुरत अधर चढ़वाया।। १० ।।

कर सतसंग खुले हिय नैना, प्रीतम प्यारे के सुने वहिं बैना।। ११ ।।
जब पहिचान मेहर से पाई, प्रीतम आप गुरू बन आई।। १२ ।।
दया करी मोहिं अंग लगाया, दुक्ख दरद सब दूर हटाया।। १३ ।।
क्या महिमा मैं राधास्वामी गाऊँ, तन मन वारूँ बल २ जाऊँ।। १४ ।।
भाग जगे गुरु चरन निहारे, अब कहुँ धन २ राधास्वामी प्यारे।। १५ ।।

।। होली ३१ ।।

होली खेलूँगी सतगुरू साथ, सुरत मन चरन लगाई।। १ ।।
करम जाल को जार, भरम की धूल उड़ाई।। २ ।।
गुनन गुलाल उड़ाय, शब्द का रंग बहाई।। ३ ।।
प्रेम नशे में चूर, चरन गुरु रहुँ लिपटाई।। ४ ।।
सतगुरु बचन पुकार, जगत में धूम मचाई।। ५ ।।
राधास्वामी महिमा गाय, सरन में निस दिन धाई।। ६ ।।
राधास्वामी नाम सुनाय, काल से जीव बचाई।। ७ ।।

।। गज़ल ३२ ।।

हे गुरू मैं तेरे दीदार का आशिक़ जो हुआ।
मन से बेज़ार सुरत वार के दीवाना हुआ।। १ ।।
इक नज़र ने तेरी ऐ जाँ मुझे बेहाल किया।
लैला के इश्क में मज़नूँ सा परेशान किया।। २ ।।
मैं हूँ बीमार मेरे दर्द का नहिं और इलाज।
मेरे दिल ज़ख्म का मरहम तेरी बोली है इलाज।। ३ ।।
तेरे मुखड़े की चमक ने किया मन को नूराँ।
सूरज ओर चाँद हज़ारों हुए उस्से ख़िजलाँ।। ४ ।।
जग में इस चक्र ज़माने का यह दस्तूर हुआ।
प्रेमी प्रीतम के चरन लाग के मशहूर हुआ।। ५ ।।
हिर्स दुनियाँ की मेरे दिल से हुई है सब दूर।
तेरे दर्शन की लगन मन में रही है भरपूर।। ६ ।।
वाह वाह भाग जगे गुरु चरनन सुर्त मिली।
चंद्र मंडल को वहीं फोड़ के गगना में पिली।। ७ ।।

राग और रागिनी मैंने सुने अन्तर जा कर।
मेरे नज़दीक हुए हिन्दु मुसलमाँ काफ़िर।। ८ ।।

।। गज़ल ३३ ।।

अर्श पर पहुँच कर मैं देखा नूर, काल को मारकर म फूँका सूर।। १ ।।
देह की सुध गई जो सुर्त चढ़ी, जाके बैठी जहाँ कि पहले थी।। २ ।।
निज गली यार के जो आशिक़ ह, भीड़ से अब एकांत लाऊँ म।। ३ ।।
जो कहूँ म सो कान देके सुनो, सुर्त खैंचो चढ़ाओ धुन को सुनो।। ४ ।।
सिर में है तेरे बाग़ ओर सतसंग, सैर कर जल्द ले गुरु का रंग।। ५ ।।
तान पुतली को आँख को मत खोल, चढ़ के आकाश का दुआरा खोल।। ६ ।।
जब चढ़े सुर्त तेरी अन्दर यार, देह की सैर कर व देख बहार।। ७ ।।
अचरजी सैर है तेरे बीचे, पिरथी ऊपर है आस्मां नीचे।। ८ ।।
बंकनाल होके आगे सुर्त चली, तिरकुटी पहुँच कर गुरू से मिली।। ९ ।।
रूप सूरज का लाल क्या बरनूँ, सहस सूरज ह उसके इक रोमूँ।। १० ।।
आगे चल सुर्त सुन्न में पहुँची, धुन किंगरी व सारँगी की सुनी।। ११ ।।
कुण्ड अमृत भरे नज़र आये, हंस रूप होय मोती चुन खाये।। १२ ।।
सुन्न को छोड़कर चली आगे, पहुँची महासुन जहाँ सोहँग जागे।। १३ ।।
हाल व्हाँ का मैं क्या कह् क्या है, जानता है वही जो पहुँचा है।। १४ ।।
रास्ते में वहाँ अँधेरा है, सतगुरु संग ही निबेड़ा है।। १५ ।।
सतगुरु संग त किया मैदाँ, काल देख उनको हो गया हैराँ।। १६ ।।
सुर्त चढ़कर गुफा में पहुँची धाय, धुन सोहँग सुनी मुक़ाम को पाय।। १७ ।।
इस मुक़ाम अचरजी को पाय मिली, खोल खिड़की को अंदरून चली।। १८।।
आगे चल सत्तलोक पहुँची धाय, और अमीं का आहार दमदम खाय।। १९।।
आगे इसके अलख अगम है मुक़ाम, तिस परे हैगा राधास्वामी नाम।।२०।।
यह मुक़ाम है अकह अपार अनाम, संत बिन कोन पा सके यह धाम।। २१ ।।
भेद सब इस जगह तमाम हुआ, सब हुए चुप्प मैं भी चुप्प हुआ।। २२ ।।

।। ग़जल ३४ ।।

निज रूप पूरे सतगुरु का प्रेम मन में छा रहा।
बचन अमृत धार उनके सुन अमी में न्हा रहा ।। १ ।।

जब से चरनों में लगा और धूर चरनों की लई।
मन के अन्तर का अन्धेरा मैल सब जाता रहा ।। २ ।।
मुखड़ा सुहावन कद्द सीधा चाल अति शोभा भरी।
तेज रोशन सीने अन्दर मन को घायल कर रहा ।। ३ ।।
जो किया सतसंग सतगुरु और बचन पूरे सुने।
दीन दुनिया झूठी लागी और न उनका ग़म रहा ।। ४ ।।
पिंड का सब भेद पोशीदा मुझे ज़ाहिर हुआ।
मेहर से पूरे गुरु के काम मेरा बन रहा ।। ५ ।।
सुर्त ने जब धुन को पकड़ा आस्माँ पर चढ़ गई।
हो गई काबिल वहाँ पर फिर न कोई ग़म रहा।। ६ ।।

सुर्त आवाज़ को पकड़ के गई,नभ पै पहुँची व जानकार हुई।। ७ ।।
देखी व्हाँ पर अजब नवीन बहार, और अनुभव जगा हुई सरशार।। ८ ।।
दुक्ख जन्म ओर मरन की तकलीफ़ात, हो गई दूर ओर गई आफ़ात।। ९ ।।
भेद अंतर का मुझ पै हाल खुला,जबकि सतगुरु से म सवाल किया।। १०।।
देह को ख़ाक की मैं छोड़ गया, काल भी थक के मुझसे बाज़ रहा।।११।।
सुर्त आकाश पर चढ़ी इक बार, कर्म कारज गए हुई करतार।।१२।।
मेरे सतगुरु ने जब करी किरपा, पद से जाकर मिली बियोग गया।। १३ ।।
करमी शरई नमाज़ी क्या जानें, भेद अभ्यासी आप पहिचानें।। १४।।
विद्यावान सब रहे मूरख, अंतरी भेद को न जानें कुछ।। १५ ।।
संशय में सब जगत रहा कूड़ा, रहा बाचक न पाया गुरु पूरा।। १६ ।।
पाये सतगुरु उसी का जागा भाग,बाक़ी बाद और बिवाद में रहे लाग।।१७।।
राधास्वामी गुरू ने की किरपा,भाग जागा है मेरा अब धुर का।। १८ ।।

।। शब्द ३५ ।।

मेरे प्यारे गुरु दातार, मँगता द्वारे खड़ा।। १ ।।
मैं रहा पुकार पुकार, मेहर कर देखो ज़रा।। २ ।।
मोहिं दीजे भक्ती दान, काल दुख बहुत दिया।। ३ ।।
मेरे तड़प उठी हिय माहिं, दरस को तरस रहा।। ४ ।।
बरसाओ घटा अपार, प्रेम रँग दीजे बहा।। ५ ।।
सुर्त भीजे अमी रस धार, तन मन होवे हरा।। ६ ।।
मेरा जनम सुफल हो जाय, तुम गुन गाऊँ सदा।। ७ ।।

मैं नीच अधम नाकार, तुम्हरे द्वारे पड़ा।। ८ ।।
मेरी बिनती सुनो धर प्यार, घट उमगाओ दया।। ९ ।।
राधास्वामी पिता हमार, जल्दी पार किया।। १० ।।

।। शब्द ३६ ।।

मेरे प्यारे रंगीले सतगुरु, मेरी सुरत चुनरिया रंग दो।। १ ।।
प्रेम सिंध तुम अगम अपारा, मोहिं प्रेम दिवानी कर दो।। २ ।।
रंग भरे रंग ही बरसाओ, मेरे मन की कलसिया भर दो।। ३ ।।
मन मोहन निज रूप तुम्हारा, मेरे हिये मुकर में धर दो।। ४ ।।
मन माया से अलग बचा कर, मोहिं अजर अमर धुर घर दो।। ५ ।।
बहु दिन बीते करत पुकारा, मेरी आसा पूरन कर दो।। ६ ।।
काल करम मोहिं बहु भरमावत, पाँचों चोर पकड़ दो।। ७ ।।
जित जाऊँ तित काल भुलावत, चरनन में चित मोर जकड़ दो।। ८ ।।
तुम दाता क्यों देर लगाओ, अब तो जल्दी कर दो।। ९ ।।
कहाँ लग कहूँ कहन नहिं आवे, माँगूँ सो मोहिं बर दो।। १० ।।
राधास्वामी प्रीतम प्यारे, मोहिं नित २ अपना सँग दो।। ११ ।।

।। शब्द ३७ ।।

राधास्वामी मेरी सुनो पुकारा, घट प्रीत बढ़ाओ सारा।। १ ।।
दृढ़ परतीत चरन में दीजै, किरपा कर अपना कर लीजै।। २ ।।
भजन भक्ति कुछ बन नहिं आवत, लोभ मोह मोहिं अति भरमावत।। ३ ।।
मेरा बल कुछ पेश न जावे, मान ईर्षा नित्त सतावे।। ४ ।।
यह मन बैरी सदा भुलावे, समझ न लावे भटका खावे।। ५ ।।
छिन रूखा छिन फीका होवे, माया मोह नींद में सोवे।। ६ ।।
बहुत जगाऊँ कहन न माने, प्रेम भक्ति की सार न जाने।। ७ ।।
सेवा में नित आलस करता, फिर फिर भोग रोग में गिरता।। ८ ।।
नित नित भरमन में भरमाई, सतसँग बचन न चित्त समाई।। ९ ।।
कुमति अधीन हुआ अब यह मन, कौन सुधारे इसको गुरु बिन।। १० ।।
याते करूँ पुकार पुकारी, हे राधास्वामी मोहिं लेव सम्हारी।। ११ ।।
दीन अधीन पड़ी तुम द्वारे, तुम बिन अब मोहिं कौन सुधारे।। १२ ।।
चरन बिना नहिं ठौर ठिकाना, जैसे काग जहाज़ निमाना।। १३ ।।
तुम बिन और न कोई आसर, राधास्वामी २ गाऊँ निस बासर।। १४ ।।

अब तो लाज तुम्हें है मेरी, सरन पड़ी होय चरनन चेरी।। १५ ।।
राधास्वामी पति और पिता दयाला, अपनी मेहर से करो निहाला।।१६।।

।। शब्द ३८ ।।

बार बार करूँ बेनती, राधास्वामी आगे।
दया करो दाता मेरे, चित चरनन लागे।। १ ।।
जनम जनम रही भूल में, नहिं पाया भेदा।
काल करम के जाल में, रही भोगत खेदा।। २ ।।
जगत जीव भरमत फिरें, नित चारों खानी।
ज्ञानी जोगी पिल रहे, सब मन की घानी।। ३ ।।
भाग जगा मेरा आदि का, मिले सतगुरु आई।
राधास्वामी धाम का, मोहिं भेद जनाई।। ४ ।।
ऊँच से ऊँचा देश है, वह अधर ठिकानी।
बिना संत पावे नहीं, स्रुत शब्द निशानी।। ५ ।।
राधास्वामी नाम की मोहिं महिमा सुनाई।
बिरह अनुराग जगाय के, घर पहुँचूँ भाई।। ६ ।।
साध संग कर सार रस, मैंने पिया अघाई।
प्रेम लगा गुरु चरन में, मन शान्ति न आई।। ७ ।।
तड़प उठे बेकल रहूँ, कस पिया घर जाई।
दरशन रस नित नित लहूँ, गहे मन थिरताई।। ८ ।।
सुरत चढ़े आकाश में, करे शब्द बिलासा।
धाम धाम निरखत चले, पावे निज घर बासा।। ९ ।।
यह आसा मेरे मन बसे, रहे चित्त उदासा।
बिनय सुनो किरपा करो, दीजे चरन निवासा।। १० ।।
तुम बिन कोइ समरथ नहीं, जासे माँगूँ दाना।
प्रेम धार बरषा करो, खोलो अमृत खाना।। ११ ।।
दीन दयाल दया करो, मेरे समरथ स्वामी।
शुकर करूँ गावत रहूँ नित राधास्वामी।। १२ ।।

।। शब्द ३९ ।।

कैसे करूँ चरन में बिनती, मेरे औगुन जायँ नहीं गिनती।। १ ।।
मैं भूला चूका भारी, गुरु बचन चित्त नहिं धारी।। २ ।।

माया के रंग रँगीला, मन इन्द्री भोग रसीला।। ३ ।।
तन मन धन सँग बहु फूला, गुरु चरनन मारग भूला।। ४ ।।
यों बीत गये दिन सारे, रहा भरमत जक्त उजाड़े।। ५ ।।
सुध सतगुरु देश न लीनी, रहा माया संग अधीनी।। ६ ।।
मद मोह मान भरमावत, नित काम क्रोध सँग धावत।। ७ ।।
नित लोभ लहर में बहता, जग जीवन सँग दुख सहता।। ८ ।।
गुरु भक्ती रीत न जानी, गुरु सतगुरु सीख न मानी।। ९ ।।
गुरु दाता भेद बतावें, नित सतसँग बचन सुनावें।। १० ।।
यह ढीठ निडर नहिं चेते, धोखे सँग आपा रेते ।। ११ ।।
गुरु का भय भाव न लावे, निज मान भोग रस चावे।। १२ ।।
क्या कीजै बस नहिं चाले, कस काटूँ मन जंजाले।। १३ ।।
मेरे राधास्वामी दयाल गुसाईं, वे काटें मन परछाईं।। १४ ।।
दे चरन ओट किरपा कर, मोहिं लेहिं बचा अपना कर।। १५ ।।
बिन राधास्वामी और न दीखे, जो लेवे छुड़ा मन जम से।। १६ ।।
फिर फिर मैं बिनती धारूँ, बिन राधास्वामी और न जानूँ।। १७ ।।
हे पिता मेहर करो पूरी, मोहिं कर लो चरनन धूरी।। १८ ।।
मन भोग छुड़ाओ मुझ से, तुम चरन पकड़ रहूँ जिय से।। १९ ।।
तन मन के बिकार निकारो, तुम दाता देर न धारो।। २० ।।
बहु दुख मैं अब तक पाये, नित मन में रहूँ मुरझाये।। २१ ।।
अब कहाँ लग कहूँ बनाई, तुम राधास्वामी करो सहाई।। २२ ।।
मन सूरत चरन लगाओ, अब के मोहिं अधम निबाहो।। २३ ।।
मैं पाप किये बहु भारी, धर छिमा करो उद्धारी ।। २४ ।।
मेरे औगुन चित्त न धारो, किरपा कर मोहिं उबारो।। २५ ।।
मेरे राधास्वामी पिता दयाला, दरशन दे करो निहाला।। २६ ।।
तन मन से न्यारा खेलूँ, तुम चरनन सूरत मेलूँ ।। २७ ।।
घट में मेरे प्रेम बढ़ाओ, निज रूप मोहिं दिखलाओ ।। २८ ।।
तब जनम सुफल होय मेरा, मैं राधास्वामी दर का चेरा ।। २९ ।।
घट प्रेम की बरखा कीजे, मन सूरत गुरु रँग भींजे ।। ३० ।।
मैं नीच अजान अनाड़ी, तुम चरनन आन पड़ा री।। ३१ ।।
मेरी बिनती सुनो पुकारी, अब कीजे दया बिचारी।। ३२ ।।

मेरे राधास्वामी परम उदारा, करो मुझ पर मेहर अपारा।। ३३ ।।
यह जीव निबल और मूरख, गुरु को नहिं जाने रक्षक।। ३४ ।।
तुम अपनी ओर निहारो, मोहिं राधास्वामी पार उतारो।। ३५ ।।

।। होली ४० ।।

मैं तो होली खेलन को ठाढ़ी,
स्वामी प्यारे झटपट खोलो किवाड़ी।। १ ।।
प्रेम रंग की बरषा कीजे, भींजे सुरत हमारी।। २ ।।
देर देर बहु देर भई है, कहाँ लग करूँ पुकारी।। ३ ।।
तड़प तड़प जिया तड़प रहा है, दर्शन देव दिखा री।। ४ ।।
सुन्दर रूप लखूँ अद्भुत छबि, होवे घट उजियारी।। ५ ।।
ऋतु फागुन अब आय मिली है, नइ नइ फाग खिला री।। ६ ।।
राधास्वामी परम दयाला, चरनन लेव मिला री।। ७ ।।
बिन्ती करूँ दोऊ कर जोड़ी, कर लो प्रेम दुलारी।। ८ ।।

।। होली ४१ ।।

होली खेलत सतगुरु संग, पिरेमन रंग भरी।। १ ।।
अबीर गुलाल उड़ावत चहुँ दिस, भर भर डालत रंग।। २ ।।
पाँच तत्व पिचकारी छोड़ी, गुन तीनों हुए तंग।। ३ ।।
मन इन्द्री को नाच नचा कर, करत काल से जंग।। ४ ।।
सतगुरु प्रेम धार हिये अंतर, गुरु का सीखी ढंग।। ५ ।।
मेहर करी गुरु चरन लगाया, फूल रही अँग अंग।। ६ ।।
राधास्वामी महिमा नित हिय जिय से, गावत उमँग उमंग।। ७ ।।

।। होली ४२ ।।

सुरत आज खेलत फाग नई ।। टेक ।।
शब्द रूप हिरदे धर अपने, गुरु रँग राच रही।। १ ।।
धुन की डोर पकड़ घट चढ़ती, मान ईरषा सकल दही।। २ ।।
राधास्वामी बचन लगें अति प्यारे, चरनन लाग रही।। ३ ।।
खेलत खेलत गुरु पद पहुँची, रंग गुलाल बही।। ४ ।।
सुन्न सिखर चढ़ भँवरगुफा पर, सत्तनाम की मेहर लई।। ५ ।।
हंसन साथ मिली अब रँग से, अलख अगम के पार गई।। ६ ।।
राधास्वामी दयाल दया निज धारी, प्रेम का दान दई।। ७ ।।

।। होली ४३ ।।

सुरत प्यारी खेलन आई फाग, धार गुरु चरनन में अनुराग।। १ ।।
प्रेम रँग भर भर लइ पिचकार,छोड़ती चहुँ दिस उमँग सम्हार।। २ ।।
सुरत का लाई अबीर गुलाल, चरन गुरु कुमकुम भर २ डाल।। ३ ।।
काम और क्रोध उड़ाई धूर, करम और भरम किये सब दूर।। ४ ।।
गाल दे काल हटाया हाल, दया ले काटा माया जाल।। ५ ।।
सुरत अब चढ़ती गगन मँझार, करत वहाँ गुरु से हेत पियार।। ६ ।।
मिली सतगुरु से जा सतलोक, अलख और अगम का पाया जोग।। ७ ।।
चरन राधास्वामी कीन्हा प्यार, प्रेम का फगुआ लीन्हा सार।। ८ ।।

कबीर साहब के शब्द

।। शब्द पहिला ।।

मन तू क्यों भूला रे भाई, तेरी सुध बुध कहाँ हिराई।। १ ।।
जैसे पंछी रैन बसेरा, बसे बृक्ष में आई।
भोर भये सब आप आप को, जहाँ तहाँ उड़ि जाई।। २ ।।
सुपने में तोहि राज मिल्यो है, हाकिम हुकुम दुहाई।
जाग पड़ा जब लाव न लशकर, पलक खुले सुध पाई।। ३ ।।
मात पिता बंधू सुत तिरिया, ना कोई सगा सगाई।
यह तो सब स्वारथ के संगी, झूठी लोक बड़ाई।। ४ ।।
सागर माहीं लहर उठत है, गिनती गिनी न जाई।
कहें कबीर सुनो भाइ साधो, दरिया लहर समाई।। ५ ।।

।। शब्द दूसरा ।।

मानत नहिं मन मोरा साधो, मानत नहिं मन मोरा रे।। टेक ।।
बार बार मैं मन समझाऊँ, जग में जीवन थोड़ा रे।। १ ।।
या देही का गरब न कीजे, क्या साँवर क्या गोरा रे।। २ ।।
बिना भक्ति तन काम न आवे, कोट सुगंध चभोरा रे।। ३ ।।
या माया का गरब न कीजे, क्या हाथी क्या घोड़ा रे।। ४ ।।
जोड़ जोड़ धन बहुत बिगूचे, लाखन कोट करोड़ा रे।। ५ ।।
दुबधा दुरमत और चतुराई, जनम गयो नर बौरा रे।। ६ ।।
अजहूँ आन मिलो सतसंगत, सतगुरु मान निहोरा रे।। ७ ।।

लेत उठाय पड़त भुइँ गिर गिर, ज्यों बालक बिन कोरा रे।। ८ ।।
कहें कबीर चरन चित राखो, ज्यों सूई में डोरा रे।। ९ ।।

।। शब्द तीसरा ।।

ऐसी दिवानी दुनिया भक्ति भाव नहिं बूझे जी।। १ ।।
कोइ आवे तो बेटा माँगे, यही गुसाई दीजे जी।। २ ।।
कोई आवे दुख का मारा, हम पर किरपा कीजै जी।। ३ ।।
कोई आवे तो दौलत माँगे, भेंट रुपइया लीजै जी।। ४ ।।
कोई करावे ब्याह सगाई, सुनत गुसाँईं रीझे जी।। ५ ।।
साँचे का कोइ गाहक नहीं, झूंठे जक्त पतीजै जी।। ६ ।।
कहें कबीर सुनो भाइ साधो, अंधों को क्या कीजै जी।। ७ ।।

।। शब्द चौथा ।।

समझ नर मूढ़ बिगारी रे।। टेक ।।

आया लाहा कारने, तैं क्यों पूँजी हारी रे।। १ ।।
गर्भबास बिनती करी, सो तैं आन बिसारी रे।। २ ।।
माया देख तू भूलिया, और सुन्दर नारी रे।। ३ ।।
बड़े साह आगे गये, ओछा ब्योपारी रे।। ४ ।।
लौंग सुपारी छाँड़ के, क्यों लादी खारी रे।। ५ ।।
तीरथ बरत में भटकता, नहिं तत्त बिचारी रे।। ६ ।।
आन देव को पूजता, तेरी होगी ख़्वारी रे।। ७ ।।
क्या ले आया क्या ले चला, करके पल्ला भारी रे।। ८ ।।
कहें कबीर जग यों चला, जैसे हारा ज्वारी रे।। ९ ।।

।। शब्द पाँचवाँ ।।

क्या माँगूँ कुछ थिर न रहाई, देखत नैन चल्यो जग जाई।। १ ।।
इस लख पूत सवा लख नाती, जा रावन घर दिया न बाती।। २ ।।
लंका सा कोट समुद्र सी खाई, जा रावन की ख़बर न पाई।। ३ ।।
सोने कै महल रूपे कै छाजा, छोड़ चले नगरी के राजा।। ४ ।।
कोइ करो महल कोइ करो टाटी, उड़ जाय हंस पड़ी रहे माटी।। ५ ।।
आवत संग न जात सँगाती, कहा भये दल बाँधे हाथी।। ६ ।।
कहें कबीर अन्त की बारी, हाथ झाड़ ज्यों चला जुवारी।। ७ ।।

।। शब्द छठवाँ ।।

जायगा मैं जानी, मन रे तू जायगा मैं जानी।
आवेगी कोइ लहर लोभ की, डूबेगा बिन पानी।। १ ।।
राज करन्ते राजा जैहें, रूपावंती रानी।
वेद पढ़न्ते पंडित जैहें, कथा सुनन्ते ज्ञानी।। २ ।।
जोगी जैहें जंगम जैहें, जैहें तपी संन्यासी।
कहें कबीर सत भक्त न जैहें,जिनकी मत ठहरानी।। ३ ।।

।। शब्द सातवाँ ।।

पीले प्याला हो मतवाला, प्याला नाम अमी रस का रे।। टेक ।।
बालपना सब खेल गँवाया, तरुन भया नारी बस का रे।। १ ।।
बृद्ध भया कफ़ बाइ ने घेरा, खाट पड़ा नहिं जाय खिसका रे।। २ ।।
नाभ कँवल बिच है कस्तूरी, जैसे मिरग फिरे बन का रे।। ३ ।।
बिन सतगुरु इतना दुख पाया, बैद मिला नहीं इस मन का रे।। ४ ।।
मात पिता बंधू सुत तिरिया, संग नहीं कोइ जाय सका रे।। ५ ।।
जब लग जीवे गुरु गुन गाले, धन जोबन है दिन दस का रे।। ६ ।।
चौरासी जो उबरा चाहे, छोड़ कामिनी का चसका रे।। ७ ।।
कहें कबीर सुनो भाइ साधो, नख सिख पूर रहा विष का रे।। ८ ।।

।। शब्द आठवाँ ।।

जारों मैं या जग की चतुराई।। टेक ।।
साईं को नाम न कबहूँ सुमिरे, जिन यह जुगत बताई।। १ ।।
जोड़त दाम काम अपने को, हम खैहें लड़का बिलसाई।। २ ।।
सो धन चोर मूस लै जावे, रहा सहा ले जाय जँवाई।। ३ ।।
यह माया जैसे कलवारिन, मद्य पिलाय रखे बोराई।। ४ ।।
इक तो पड़े धूल में लोटें, एक कहें चोखी दे माई।। ५ ।।
सुर नर मुनि माया छल मारे, पीर पैग़म्बर को धर खाई।। ६ ।।
कोइ इक भाग बचे सतसंगत, हाथ मले तिनको पछिताई।। ७ ।।
कहें कबीर सुनो भाइ साधो, ले फाँसी हमहूँ को आई।। ८ ।।
गुरु की दया साध की संगत, बच गये अभय निशान बजाई।। ९ ।।

* * * * *

॥ शब्द नवाँ ॥

तन धर सुखिया कोइ ना देखा, जो देखा सो दुखिया हो।
उदय अस्त की बात कहत हैं, सब का किया बिबेका हो॥ १ ॥
घाटे बाढ़े सब जग दुखिया, क्या गिरही बैरागी हो।
सुकदेव अचारज दुख के डर से, गर्भ से माया त्यागी हो॥ २ ॥
जोगी दुखिया जंगम दुखिया, तपसी को दुख दूना हो।
आसा तृश्ना सब को ब्यापे, कोई महल न सूना हो॥ ३ ॥
साँच कहूँ तो कोई न माने, झूठ कहा नहिं जाई हो।
ब्रह्मा बिश्नु महेश्वर दुखिया, जिन यह राह चलाई हो॥ ४ ॥
अवधू दुखिया भूपति दुखिया, रंक दुखी बिपरीती हो॥
कहें कबीर सकल जग दुखिया, संत सुखी मन जीती हो॥ ५ ॥

॥ शब्द दसवाँ ॥

मानुष जनम सुधारो साधो, धोखे काहे बिगाड़ो हो।
ऐसा समय बहुर नहिं पइहो, जनम जुआ मति हारो हो॥ १ ॥
गुड़ा गुड़ी के ख़्याल जनि भूलो, मूल तत्त लौ लाओ हो।
जब लग घट से परचे नाहीं, तब लग कुछ नहिं पाओ हो॥ २ ॥
तीरथ ब्रत और जप तप संजम, या करनी मत भूलो हो।
करम फंद में जुग जुग पड़िहो, फिर फिर जोनि में झूलो हो॥ ३ ॥
ना कुछ न्हाया ना कुछ धोया, ना कुछ घंट बजाया हो।
ना कुछ नेती ना कुछ धोती, ना कुछ नाचे गाया हो॥ ४ ॥
सिंगी सेल्ही भभूत और बटुआ, साँई स्वाँग से न्यारा हो।
कहें कबीर मुक्ति जो चाहो, मानो शब्द हमारा हो ॥ ५ ॥

॥ शब्द ग्यारहवाँ ॥

जिनके नाम ना है हिये॥ टेक ॥

क्या होवे गल माला डाले, कहा सुमिरनी लिये॥ १ ॥
क्या होवे पुस्तक के बाँचे, कहा संख धुन किये॥ २ ॥
क्या होवे काशी में बस के, क्या गंगा जल पिये॥ ३ ॥
होवे कहा बरत के राखे, कहा तिलक सिर दिये॥ ४ ॥
कहें कबीर सुनो भाइ साधो, जाता है जम लिये॥ ५ ॥

॥ शब्द बारहवाँ ॥

देखो जग बौराना साधो गुरु का मरम न जाना।। टेक ।।
हिंदू कहत हैं राम हमारा, मुसलमान रहमाना।
आपस में दोउ लड़े मरत हैं, दुबिधा में लिपटाना।। १ ।।
बहुत मिले मोहिं नेमी धरमी, प्रात करें अस्नाना।
आतम छोड़ पषाने पूजें, तिनका थोथा ज्ञाना।। २ ।।
एक जो कहिये पीर ओलिया, पढ़ें किताब कुराना।
करें मुरीद क़बर बतलावें, उनहूँ खदा न जाना।। ३ ।।
हिन्दु की दया मेहर तुरकन की, दोनों घर से भागी।
यह करें ज़िबह वह झटका मारें, आग दोऊ घर लागी।। ४ ।।
या बिधि हँसत चलत हैं हम को, आप कहावें स्याना।
कहें कबीर सुनो भाइ साधो, इनमें कौन दिवाना।। ५ ।।

॥ शब्द तेरहवाँ ॥

साधो पाँड़े निपुन कसाई।। टेक ।।
बकरी मार भेड़ को धावे, दिल में दरद न आई।। १ ।।
कर अस्नान तिलक दे बैठे, बिधि से देबि पुजाई।। २ ।।
आतम मार पलक में बिनसे, रुधिर की नदी बहाई।। ३ ।।
अति पुनीत ऊँचे कुल कहिये, सभा माहिं अधिकाई।। ४ ।।
इनसे गुरु दिक्षा सब माँगें, हँसी आवै मोहिं भाई।। ५ ।।
पाप करन को कथा सुनावें, करम करावें नीचा।। ६ ।।
हम तो दोऊ परस्पर दीठा, बाँधे उनको जम जग बीचा।। ७ ।।
गाय बधे सो तुरक कहावे, यह क्या इनसे छोटे।। ८ ।।
कहें कबीर सुनो भाइ साधो, कलि में ब्राह्मण खोटे।। ९ ।।

॥ शब्द चौदहवाँ ॥

नइहरवा हम को नहिं भाव।। टेक ।।
साँइ की नगरी परम अति सुन्दर, जहाँ कोई जाय न आवे।
चाँद सुरज जहाँ पौन न पानी, को सँदेश पहुँचावे।
दरद यह साँई को सुनावे।। १ ।।

आगे चलों पंथ नहिं सूझे, पीछे दोष लगावे।
केहि बिधि ससुरे जावँ मोरी सजनी बिरहा ज़ोर जनावे।
विषय रस नाच नचावे।। २ ।।

बिन सतगुरु अपना नहिं कोई, को यह राह बतावे।
कहत कबीर सुनो भाइ साधो, सपने न प्रीतम पावे।
तपन यह जिय की बुझावे।। ३ ।।

।।शब्द पन्द्रहवाँ।।

कोइ प्रेम की पेंग झुलाओ रे ।। टेक ।।

भुज के खंभ और प्रेम के रस से, मन महबूब झुलाओ रे।। १ ।।
सूहा चोला पहिर अमोला, पिया घट पिया को रिझाओ रे।। २ ।।
नैनन बादर की झर लाओ, श्याम घटा उर छाओ रे।। ३ ।।
आवत जावत स्रुत की राह पर, फ़िकर पिया को सुनाओ रे।। ४ ।।
कहत कबीर सुनो भाइ साधो, पिया को ध्यान चित लाओ रे।। ५ ।।

।। शब्द सोलहवाँ ।।

करो जतन सखी साँईं मिलन की ।। टेक ।।

गुड़िया गुड़वा सूप सुपलिया, तज दे बुध लड़कइयाँ खेलन की।। १ ।।
देवता पित्तर भुइयाँ भवानी, यह मारग चौरासी चलन की।। २ ।।
ऊँचा महल अजब रँग बँगला, साँइ की सेज वहाँ लगी फुलन की।।३।।
तन मन धन सब अरपन कर वहाँ,
सुरत सम्हार पड़ पइयाँ सजन की।।४।।
कहें कबीर निर्भय होय हंसा, कुंजी बता दूँ ताला खुलन की।। ५ ।।

।। शब्द सत्राहवाँ ।।

गुरु बिन दाता कोइ नहीं, जग माँगन हारा।
तीन लोक ब्रह्मॉंड में, सब के भरतारा।। १ ।।
अपराधी तीरथ चले, क्या तीरथ तारे।
काम क्रोध मद ना मिटा, क्या देह पखारे।। २ ।।
कागज़ की नौका बनी, बिच लोहा भारे।
शब्द भेद जाने नहीं, मूरख पच हारे।। ३ ।।

बाँछ मनोरथ पिया मिले, घट भया उजारा।
सतगुरु पार उतारि हैं, सब सन्त पुकारा।। ४ ।।
पाहन को क्या पूजिये, यामें क्या पावे।
अठसठ के फल घर मिलें, जो साध जिंवावे।। ५ ।।
कहें कबीर बिचार के, अन्धा खल डोले।
अंधे को सूझे नहीं, घट ही में बोले।। ६ ।।

।। शब्द अठारहवाँ ।।

लखे रे कोइ बिरला पद निरबान ।। टेक ।।
तीन लोक में यह जम राजा, चौथे लोक में नाम निशान।। १ ।।
याहि लखत इन्द्रादिक थक गये, ब्रह्मा थक गये पढ़त पुरान।। २ ।।
गोरखदत्त बशिष्ट ब्यास मुनि, शंभू थक गये धर २ ध्यान।। ३ ।।
कहें कबीर लखे कोइ बिरला, सतगुरु लग गये जिनके कान।। ४ ।।

।। शब्द उन्नीसवाँ ।।

भक्ति सब कोइ करे, भरमना ना टरे, भरम जंजाल दुख दुंद भारी।।१।।
काल के जाल में जक्त सब फँस रहा, आस की डोर जम देत डारी।। २ ।।
ज्ञान सूझे नहीं, शब्द बूझे नहीं, सरन ओटा नहीं, गर्ब धारी।। ३ ।।
ब्रह्म चीन्हे नहीं, भरम पूजत फिरे, हिय के नैन क्यों फोर डारी।। ४ ।।
काट सिर जीव, घर थाप निर्जीव को, जीव के हतन अपराध भारी।। ५ ।।
जीव का दर्द, बेदर्द कसके नहीं, जीभ के स्वाद नित जीव मारी।। ६ ।।
एक पग ठाढ़ कर जोर बिनती करे, रच्छ बल जाऊँ सरन तिहारी।। ७ ।।
वहाँ कुछ है नहीं, अरज़ अंधा करे, कठिन डंडोत नहिं टरत टारी।। ८।।
यही आकर्म से नर्क पापी पड़े, करम चंडाल की राह न्यारी।। ९ ।।
धन्य सोभाग जिन साध संगत करी, ज्ञान की दृष्टि लीजे बिचारी।। १० ।।
सत्त दावा गहो, आप निर्भय रहो, आपको चीन्ह लख नाम सारी।। ११ ।।
कहें कबीर तू सत्त को नज़र कर, बोलता ब्रह्म सब घट उजारी।।१२।।

।। शब्द बीसवाँ ।।

जाग री मेरी सुरत सोहागिन जाग री।। टेक ।।
क्या तुम सोवत मोह नींद में, उठके भजनियाँ में लाग री।। १ ।।
चित से शब्द सुनो सरवन दे, उठत मधुर धुन राग री।। २ ।।

दोउ कर जोर सीस चरनन दे, भक्ति अचल बर माँग री।। ३ ।।
कहत कबीर सुनो भाइ साधो, जगत पीठ दै भाग री।। ४ ।।

।। शब्द इक्कीसवाँ ।।

करो रे मन वा दिन की तदबीर।। टेक ।।
जब जमराजा आन अड़ेंगे, नेक धरत नहिं धीर।। १ ।।
मार मार सोंटन प्रान निकासत, नैनन भरि आयो नीर।। २ ।।
भवसागर एक अगम पन्थ है, नदिया बहत गँभीर।। ३ ।।
नाव न बेड़ा, लोग घनेरा, खेवट है बेपीर।। ४ ।।
घर तिरिया अरधंगी बैठी, मात पिता सुत बीर।। ५ ।।
माल मुलक की कौन चलावे, संग न जात शरीर।। ६ ।।
ले कै बोरत नरक कुंड में ब्याकुल होत सरीर।। ७ ।।
कहत कबीर नर अब से चेतो, माफ़ होय तक़सीर।। ८ ।।

।। रेख़्ता शब्द बाईसवाँ ।।

हमन हैं इश्क़ मस्ताना, हमन को होशियारी क्या।
रहें आज़ाद या जग से, हमन दुनियाँ से यारी क्या।। १ ।।
जो बिछुड़े हैं पियारे से, भटकते दर बदर फिरते।
हमारा यार है हम में, हमन को इन्तिज़ारी क्या।। २ ।।
ख़लक़ सब नाम अपने को, बहुत कर सिर पटकता है।
हमन गुरु नाम साँचा है, हमन दुनियाँ से यारी क्या।। ३ ।।
न पल बिछुड़ें पिया हम से, न हम बिछुड़ें पियारे से।
उन्हीं से नेह लागी है, हमन को बेक़रारी क्या।। ४ ।।
कबीरा इश्क़ का माता, दुई को दूर कर दिल से।
जो चलना राह नाजुक है, हमन सिर बोझ भारी क्या।। ५ ।।

।। शब्द तेईसवाँ ।।

मिलना कठिन है, कैसे मिलूँगी पिया जाय।। टेक ।।
समझ सोच पग धरूँ जतन से, बार बार डिग जाय।
ऊँची गैल राह रपटीली, पाँव नहीं ठहराय।। १ ।।
लोक लाज कुल की मरजादा, देखत मन सकुचाय।
नइहर बास बसूँ पीहर में, लाज तजी नहिं जाय।। २ ।।

अधर भूम जहाँ महल पिया का, हम पै चढ़ो न जाय।
धन भइ बारी पुरुष भये भोला, सुरत झकोला खाय।। ३ ।।
दूती सतगुरु मिले बीच में, दीन्हों भेद बताय।
दास कबीर पिया से भेंटे, सीतल कंठ लगाय।। ४ ।।

।। शब्द चौबीसवाँ ।।

छाँड़ दे मन बौरा डगमग ।। टेक ।।
अब तो जरे मरे बन आवे, लीन्हों हाथ सिंधोरा।
प्रीत प्रतीत करो दृढ़ गुरु की, सुनो शब्द घनघोरा।। १ ।।
होय निसंक मगन होय नाचे, लोभ मोह भ्रम छाँड़े।
सूरा कहा मरन सों डरपे, सती न संचय भाँड़े।। २ ।।
लोक लाज कुल की मरजादा, यही गले में फाँसी।
आगे होय पग पीछे धरि हो, होय जगत में हाँसी।। ३ ।।
अगिन जरे ना सती कहावे, रन जूझे नहिं सूरा।
बिरह अगिन अन्दर परजारे, तब पावे पद पूरा।। ४ ।।
यह संसार सकल जग मैला, नाम गहे तेइ सूचा।
कहें कबीर भक्ति मत छांड़ो, गिरत परत चढ़ ऊँचा।। ५ ।।

।। रेख़्ता शब्द पच्चीसवाँ ।।

सुख सिंध की सैर का स्वाद तब पाइ है, चाह का चोतरा भूल जावे।
बीज के माहिं ज्यों बृक्ष बिस्तार यों, चाह के माहिं सब रोग आवे।। १ ।।
दृढ़ बैराग में होय आरूढ़ मन, चाह के चौतरे आग दीजै।
कहें कब्बीर यों होय निरबासना, तत्त सों रत्त होय काज कीजै।। २ ।।

।। रेख़्ता शब्द छब्बीसवाँ ।।

सूर संग्राम को देख भागे नहीं, देख भागे सोई सूर नाहीं।
काम ओर क्रोध मद लोभ सों जूझना, मँडा घमसान तहाँ खेत माहीं।१।
सील ओर साँच संतोष शाही भये, नाम शमशेर तहाँ ख़ूब बाजे।
कहें कब्बीर कोइ जूझि है सूरमाँ, कायराँ भीड़ तहाँ तुर्त भाजे।२।

।। रेख़्ता शब्द सत्ताईसवाँ ।।

साध का खेल तो बिकट बेंड़ा, मती सती ओर सूर की चाल आगे।
सूर घमसान है पलक दो चार का, सती घमसान पल एक लागे।। १ ।।

साध संग्राम है रैन दिन जूझना, देह पर्यन्त का काम भाई।
कहें कब्बीर टुक बाग ढीली करै,उलट मन गगन सों ज़मों आई।। २ ।।

।। शब्द अट्ठाईसवाँ ।।

साधो भाई जीवत ही करो आसा ।। टेक ।।
जीवत समझे जीवत बूझे, जीवत मुक्ति निवासा।
जियत करम की फाँस न काटी, मुए मुक्ति की आसा।। १ ।।
तन छूटे जिव मिलन कहत है, सो सब झूँठी आसा।
अबहूँ मिला सो जबहूँ मिलेगा, नहिं तो जमपुर बासा।। २ ।।
दूर दूर ढूँढे मन लोभी, मिटै न गर्भ तरासा।
साध सन्त की करे न बँदगी, काटें करम की फाँसा।। ३ ।।
सत्त गहे सतगुरु को चीन्हे, सत्त नाम बिश्वासा।
कहें कबीर साधन हितकारी, हम साधन के दासा।। ४ ।।

।। शब्द उन्तीसवाँ ।।

भक्ति का मारग झीना रे।। टेक ।।
नहिं अचाह नहिं चाहना, चरनन लौलीना रे।। १ ।।
साधन के सतसंग में, रहे निस दिन भीना रे।। २ ।।
शब्द में सुर्त ऐसे बसे, जैसे जल मीना रे।। ३ ।।
मान मनी को यों तजे, जैसे तेली पीना रे।। ४ ।।
दया छिमा संतोष गहे, रहे अति आधीना रे।। ५ ।।
परमारथ में देत सिर, कुछ बिलम न कीना रे।। ६ ।।
कहें कबीर मत भक्ति का, परगट कह दीना रे।। ७ ।।

।। शब्द तीसवाँ ।।

सतगुरु हो महाराज मोपै, साँईं रँग डारा ।। टेक ।।
शब्द की चोट लगी मेरे मन में, बेध गयो तन सारा।। १ ।।
औषध मूल कछू नहिं लागे, क्या करे बैद बिचारा।। २ ।।
सुर नर मुनि जन पीर औलिया, कोई न पावे पारा।। ३ ।।
दास कबीर सर्ब रँग रँगिया, सब रँग से रँग न्यारा।। ४ ।।

।। शब्द इकतीसवाँ ।।

गुरु ने मोहिं दीन्हीं अजब जड़ी।। टेक ।।

सो जड़ी मोहिं प्यारी लगत है, अमृत रसन भरी।। १ ।।
काया नगर अजब इस बँगला, तामें गुप्त धरी।। २ ।।
पांचो नाग पचीसो नागिन, सूँघत तुरत मरी।। ३ ।।
या कारे ने सब जग खायो, सतगुरु देख डरी।। ४ ।।
कहत कबीर सुनो भाइ साधो, ले परिवार तरी।। ५ ।।

।। शब्द बत्तीसवाँ ।।

आगे समझ पड़ेगा भाई।। टेक ।।
यहाँ अहार उद्र भर खायो, बहु बिधि माँस बढ़ाई।। १ ।।
जीव जन्तु रस मार खात हो, तनिक दरद नहिं आई।। २ ।।
यहाँ तो पर धन लूट खात हो, गल बिच फाँस लगाई।। ३ ।।
तिन के पीछे तीन पियादा, छिन छिन ख़बर लगाई।। ४ ।।
साध संत की निन्दा कीन्हा, आपन जनम नसाई।। ५ ।।
पैर पैर पर काँटा धसि है, यह फल आगे आई।। ६ ।।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, दुनिया है दुचिताई।। ७ ।।
सांच कहै सो मारा जावे, झूठे जग पतियाई।। ८ ।।

* * * * *

तुलसी साहब के शब्द

।। शब्द १ ।।

नर तन संग अंग बिनसन को ।। टेक ।।
यह धन धाम कुटम्ब और काया, माया तज बन बास बसन को।
खीर खाँड़ घृत पिंड सँवारा, छूटे तन पल माँहि नसन को।। १ ।।
माही मरातिब हुकुम रहे सोइ, कोइ मंदिर नहिं दीप चसन को।
तू तुलसी कहो केहि लेखन में, जाता जग जम जाल फँसन को।। २ ।।

।। रेख़ता २ ।।

क्या फिरत है भुलाना, दिन चार में चलाना ।
काया कुटम्ब सब लोग, यह जग देख क्यों भुलाना ।। १ ।।

धन माल मुल्क घनेरे, कह कर गये बहुतेरे ।
कितने जतन कर बढ़े, घट तंत ना तुलाना ।। २ ।।
हुशियार हो दिवाने, चलना मंज़िल बिहाने ।
बाक़ी रहे पै आवता, जमराज का बुलाना ।। ३ ।।
लिखते घड़ी घड़ी, कागज़ क़लम चढ़ी ।
तुलसी हुकुम सरकार का, कह देत हूँ उलाना ।। ४ ।।

।। रेख़्ता ३ ।।

दिन चार है बसेरा, जग में न कोइ तेरा।
सब ही बटाऊ लोग हैं, उठ जायँगे सबेरा।। १ ।।
अपनी करो फ़िकर, चलने के जो ज़िकर।
रहने का यहाँ न काम है, फिर जा करो न फेरा।। २ ।।
तन में पवन बसेई, जावे हवा नस देही।
टुक जीवन के कारने, दुख सहत क्यों घनेरा।। ३ ।।
सुख देख क्यों भुलाना, कुछ दिन रहे पै जाना।
जैसे मुसाफ़िर रात रह कर, जात है सबेरा।। ४ ।।
क्या सोवता पड़ा, जम द्वार पै खड़ा।
तुलसी तयारी भोर कर, फिर रात को अँधेरा।। ५ ।।

।। अड़ियल ४ ।।

देखो दृष्ट पसार सार कुछ जग में नाहीं।
दिना चार का रंग संग नहिं जावे भाई।। १ ।।
धन संपत परिवार काम एको नहिं आवे।
अरे हाँरे तुलसी दीपक संग।
पतंग प्रान छिन में तज जावे।। २ ।।

।। अड़ियल ५ ।।

फूले फूले फिरें देख धन धाम बड़ाई।
तन फुलेल और तेल चाम को चुपड़ें भाई।। १ ।।
दिना चार का खेल मिले फिर ख़ाक में।
अरे हाँरे तुलसी पकड़ फ़रिश्ते करें सलाई आँख में।। २ ।।

।। अड़ियल ६ ।।

लोभ लोग पच मरे कहो को खोज लगावे।
इन्द्री रस सुख स्वाद भोग नीके कर भावे।। १ ।।
राम राम की टेक भेष सब जक्त पुकारा।
अरे हाँरे तुलसी जीवत मिले न मुक्ति।
मुए को कहें लबारा।। २ ।।

।। झूलना ७ ।।

अरे देख निहार बज़ार है रे, जग बीच न काम कोइ आवता है।। १ ।।
सुत मात पिता नर नारि त्रिया, देख अंत को संग न जावता है।। २ ।।
तुलसीदास बिचार जम फाँस है रे, बिधि बाँधि के काल चबावता है।। ३ ।।

।। झूलना ८ ।।

इस जग में बूझ बिचार ले रे, नहिं साथ तेरे कुछ जावता है।। १ ।।
अरे देख अलफ़त का मत झूठा, यही ख़्वाब का ख़ेल कहावता है।। २ ।।
तुलसीदास यह दम से स्वाँस है रे,सोई ग़म के गोले चलावता है।। ३ ।।

।। सवैया ६ ।।

तेल फुलेल करे रस केल सो, माया के फ़ेल में सार भुलानो।। १ ।।
मात पिता सुत नार निहार सो, झूँठ पसार को देख फुलानो।। २ ।।
यह दिन चार बिचार न लार, सो भूल असार के संग तुलानो।। ३ ।।
तासे कहे तुलसी निज के, तन छूट गयो जम देत उलानो।। ४ ।।

।। सवैया १० ।।

दृष्ट पसार के देख तुही, जग माहिं रह्यो कोइ बूझ अमाना।। १ ।।
पंडो भभीषन भीम बली, गये खोज गली केहि राह समाना।। २ ।।
रावन लंक पती पै हती, सो रती भर संग न देख निदाना।। ३ ।।
तू केहि लेखे में देख कहुँ, तुलसी सतसंग से होत न हाना।। ४ ।।

।। शब्द ११ ।।

इक दिन जाना बे जाना टुक वा की बात चलाना। टेक ।
सुख संपत यह सब जग लूटे छूटे माल ख़जाना।। १ ।।
धन माया अपनी तू बिचारे मारे मौत निशाना।। २ ।।
माल मुलक हाथी और घोड छोड़े साज समाना।। ३ ।।
तलबी हुकम तगादा लावे खावे काल निदाना।। ४ ।।

सब सुन्दर तज महल अटारी नारी नेह भुलाना।। ५ ।।
चलत बार कुछ संग न लीन्हा कीन्हा हंस पयाना।। ६ ।।
झूँठी अंग उल्फ़त मन मूढ़ा बूड़ा जनम जहाना।। ७ ।।
तुलसी तुच्छ तनक तन स्वाँसा आस अनन्त बँधाना।। ८ ।।

।। शब्द १२ ।।

कोइ नहिं अपना रे अपना, अरे यह जक्त रैन का सुपना।। १ ।।
मट्टी में मट्टी मिल जैहै, पै है करम कलपना।। २ ।।
काया बिनस ख़बर नहिं दम की, जम की डगर डरपना।। ३ ।।
बन्धन जाल जुगन जम दैहें, करिहें काल थरपना।। ४ ।।
छूटे जब सतगुरु चरनन पर, तन मन सीस अरपना।। ५ ।।
लागी रहे बिरह संतन की, ज्यों जल मीन तड़पना।। ६ ।।
सुन्दर सुख सन्मुख सूरज के, सूरत अजपा जपना।। ७ ।।
मारग मुकर महल दरपन में, मन में माल परखना।। ८ ।।
तुलसी मँज़िल मूल कहाँ सूझे, बूझे एक हरफ़ ना।। ९ ।।

।। शब्द १३ ।।

चेत सबेरे चलना बाट।। टेक ।।

मन माली तन बाग़ लगाया, चलत मुसाफ़िर को बिलमाया।
बिष के लड्डू ताहि खवावे, लूट लिया स्वादों के चाट।। १ ।।
तन सराय में मन उरझाना , भटियारी के रूप लुभाना।
निस बासर वाही सँग रहता, कर हिसाब सतगुरु की हाट।। २ ।।
ज्ञान का घोड़ा बनाय के लीजै, प्रेम लगाम ताहि मुख दीजै।
सुरत एड़ दे आगे चलना, भौ सागर का चौड़ा फाट ।। ३ ।।
क्या सोवे उठ साहब सुमिरो, दसो दिसा काल निज घेरो।
तुलसी कहत चेत नर अंधा, अब क्या पड़ा बिछाये खाट।। ४ ।।

।। शब्द १४ ।।

क्या सोवत ग़ाफ़िल चेत, सिर पर काल खड़ा।। टेक ।।
ज़ोर जुलम की रीत बिचारी, कर माया से हेत।। १ ।।
जम की ज़बर ख़बर नहिं जानी, बाँध नर्क दुख देत।। २ ।।
बिनसे बदन अगिन बिच जारे, खीर खाँड़ रस लेत।। ३ ।।

फिर फिर काल कमान चढ़ावे, मार लेत खुल खेत।। ४ ।।
बिष रस रंग संग बहु कीन्हा, कर कर बैस बितेत।। ५ ।।
बिरध बनाय बूढ़ तन भइया, कारे केस भये सेत।। ६ ।।
सुत दारा आदर अलसाने, बुढ़वा मरे परेत।। ७ ।।
छल बल माया कर गई रे, यह दुनिया के हेत।। ८ ।।
मनी मान से धनी न चीन्हा, चिड़ियाँ चुग गई खेत।। ९ ।।
अब पछताये क्या हो तुलसी, पहिल रहा अचेत।। १० ।।

।। शब्द १५ ।।

जात रे तन बाद बिताना।। टेक ।।
छिन २ उमर घटत दिन राती, सोवत क्या उठ जाग बिहाना।। १ ।।
यह देही बालू सम भीती, बिनसत पल बेहोश हैवाना।। २ ।।
ज्यों गुलाल कुमकुम भर मारे, फेंक फूट जिमि जात निदाना।। ३ ।।
यह तन की अन आस अनारी, तैं बिष फंदन फाँस फँदाना।। ४ ।।
यह माया काया छिन भंगी, रँग रस कर कर डारत खाना।। ५ ।।
सुख सम्पत आशिक इंद्रिन में, बिष बस चौज मौज मन माना।। ६ ।।
तुलसी ताव दाव नर देही, बासर निस गई भजन न जाना।। ७ ।।

।। शब्द १६ ।।

गवन गये तज काया रे हंसा।। टेक ।।
मात पिता परिवार कुटँम्ब सब, छोड़ चले धन माया।। १ ।।
रंग महल सुख सेज बिछौना, रुचि रुचि भवन बनाया।। २।।
प्यारे प्रीत मीत हितकारी, कोई काम न आया।। ३ ।।
हंसा आप अकेला चाले, जंगल बास बसाया।। ४ ।।
पुत्र पंच सब जाति जुरी है, भूमी काठ बिछाया।। ५ ।।
चिता बनाय रची धर काया, जल बल ख़ाक मिलाया।। ६ ।।
प्रानपती जहाँ डेरा कीन्हा, जो जस कर्म कमाया।। ७ ।।
हंसा हंस मिले सरवर में, कागा कुमत समाया।। ८ ।।
तुलसी मानसरोवर मुक्ता, जुग २ हंसन पाया।। ९ ।।
कागा कुमति जीव करमन से, फिर भव जनम धराया।। १० ।।

* * * * *

॥ शब्द १७ ॥

धर नर देह जगत में, कछु न बनी रे॥ टेक ॥
आप अपनपो को नहिं चीन्हा, लीन्हा मान मनी रे॥ १ ॥
यह जड़ जीव नीव जुग जुग की, गहरी ठान ठनी रे॥ २ ॥
धृग धन धाम सोन अरू चाँदी, बाँधो पोट घनी रे॥ ३ ॥
जोर बटोर किया बहुतेरा, इक दिन फ़ना फ़नी रे॥ ४ ॥
ऐसा जनम पाय कर भूले, यह इनसाफ छनी रे॥ ५ ॥
मन तन धन कोइ काम न आवे, चाम के धाम बनी रे॥ ६ ॥
तुलसी 'तुच्छ तजो रँग काँचो, साचो नाम धनी रे॥ ७ ॥

॥ रेख़ता १८ ॥

बेद पुरान सब झूठ का खेल है, लूट बदफ़ेल सब खाना खाया।१।
भया मन जोश भौ भागवत पढ़े से, चढ़ा मन ज्ञान का मान आया।२।
अगम की राह का खोज कीन्हा नहीं, रोज़ रस ज्ञान बस लोभ माया।३।
सुने जजमान परमान गये खान में, मुक्ति नित कहत भई भूत काया।४।
दास तुलसी टुक जीभ के कारने, अल्प सुख मान फिर नर्क पाया।५।

॥ ग़ज़ल १९ ॥

पूजा और सेवा कर घंट बजावे।
कर कर पाखंड लोग बहुत रिझावे॥ १ ॥
तन के तत मंदिर को देखो जाई।
आतम सा देव जाहि पूजो भाई॥ २ ॥
पाहन की मूरत का झूँठ पसारा।
पूजें मूरख बेहोश जनम बिगारा॥ ३ ॥
अरधे ओर उरधे बिच करले मेला।
तुलसी मुश्ताक़ मेहर अद्‌भुत खेला॥ ४ ॥

॥ ग़ज़ल २० ॥

संतन का प्यारा यार न्यारा भाई।
जहँ नहिं बैराट खोज निरगुन पाई॥ १ ॥
बह्मा और बेद नहिं जाने भेवा।
शंकर और शेष नहीं जाने देवा॥ २ ॥

जोगी और ऋषी मुनी पहुँचे नाहीं।
सिमरित ओर शास्तर की कौन चलाई।। ३ ।।
जहाँ जोती निज निराकार कोई न जावे।
संत पंथ राह सोई अगम कहावे।। ४ ।।
ब्राह्मन और पंडित जग जीव बिचारा।
जाने क्या भीख माँग पेट सँवारा।। ५ ।।
जग का मल मैल माँग जनम बिगारा।
बही बही सब बैल भये भव की धारा।। ६ ।।
निरगुन और सरगुन का नाहीं खेला।
संत पन्थ तुलसी कहै अगम अकेला।। ७ ।।

।। अड़ियल २१ ।।

वाको खोज गँवार सार जिन किया पसारा।
रोम रोम ब्रह्मण्ड कोट छबि रबि उजियारा।। १ ।।
अजर अमर वह लोक सोक सब दूर बहावे।
अरे हाँरे तुलसी रामकृष्न औतार दसो नहिं जाने पावे।। २ ।।

।। अड़ियल २२ ।।

संत मता है सार और सब जाल पसारा।
परमहंस जग भेष बहे सब मन की लारा।। १ ।।
संत बिना नहिं घाट बाट एको नहिं पावे।
अरे हाँरे तुलसी भटक २ भ्रम खान।
संत बिन भव में आवे।। २ ।।

।। शब्द २३ ।।

घर सुधि भूल भँवर में आनि पर्यो रे।। टेक ।।
जग सुभ असुभ कर्म मति मन्दा फन्दा काल कर्यो रे।। १ ।।
आसा नदी बहै तट नाहीं भारी भर्म भर्यो रे।। २ ।।
दिन अरू रैन चैन नहिं पावे तृष्ना माहिं मर्यो रे।। ३ ।।
लोभ अगिन धर दीन पलीता जीते जनम जर्यो रे।। ४ ।।
नर तन पाय परख नहीं कीन्हा भौसिंध नाहिं तर्यो रे।। ५ ।।

तुलसी ताव दाव नहिं देखा मन की चाह चख्यो रे।। ६ ।।

॥ शब्द २४ ॥

नर धर देह कुशल कहा कीन्हीं।। टेक ।।

साधू संग रंग नहिं रँाचे, खोटी बुद्धि लटक लौ लीनी।। १ ।।
आठो पहर विषय रस माहीं, जुग जुग रही री सुरत रस भीनी।। २ ।।
धुर गुरु आदि उमेद न राखी, चाखी चौरस परस न पीनी।। ३ ।।
तुलसी तन बरबाद गयो यों, खायो माहुर मरम न चीन्ही।। ४ ।।

॥ रेख़्ता २५ ॥

नर का जनम मिलता नहीं, ग़ाफ़िल ग़रूरी ना रखो।
दिन दो बसेरा बास है, आख़िर फ़ना मरना सही।। १ ।।
बेहोश ! मौत सिर पर खड़ी, मारे निशाना ताक के।
हर वक़्त शिकारी खेलता, जम से रहे सब हार के।। २ ।।
घेरा पड़ा है काल का, कोई बचन पावे नहीं।
जग में जुलम तोबा पड़ी, इन से पनाह देवे दई।। ३ ।।
चलने के दिन थोड़े रहे, हर दम नक़ारा कूँच का।
नहिं तूँ तेरा संगी भया, तुलसी तंवक़्क़ा ना किया।। ४ ।।

॥ रेख़्ता २६ ॥

जगत ग़ाफ़िल पड़ा सोता रैन दिन ख़्वाब में खोता।। १ ।।
अवादा आन के पहुँचा ख़ौफ़ जम का नहीं सोचा।। २ ।।
फिरे अलमस्त माया में पारधी काल काया में।। ३ ।।
गऊ सिंघ बाट में घेरे डगर जिव काल त्यों हेरे।। ४ ।।
बचै कोइ संत के सरना अमर होवे मुक्त चरना।। ५ ।।
और कहुँ ना कुशल भाई कही सब सन्त गोहराई।। ६ ।।
बिना उन के जनम मरना भटक भौसिंध में पड़ना।। ७ ।।
जुगन जुग कर्म से खाना बढ़े अघ पाप अभिमाना।। ८ ।।
जुलम के हेत हलकारे मनी मग़रूर मतवारे।। ६ ।।
पकड़ जम जूतियाँ मारे बहुर बिलकुल नरक डारे।। १० ।।
देख यह तन नहीं मिलता कुटम्ब परिवार में पिलता।। ११ ।।
समझ सोहबत बड़ी खोटी घसीटै काल धर चोटी।। १२ ।।

मोह की फाँस में फंदे जनम बीते बिबस गंदे।। १३ ।।
बदन ज्यों ओस का पानी अगर यों जान ज़िन्दगानी।। १४ ।।
तेरे संग ना कोई जावे मार हर वक़्त क्यों खावे।। १५ ।।
कहै तुलसी जनम बीता ख़लक़ जावे हाथ रीता।। १६ ।।

।। अड़ियल २७ ।।

शास्तर बेद पुराण पढ़े ब्याकरण अठारा।
पढ़ पढ़ मुए लबार संत गत नाहिं बिचारा।। १ ।।
घर घर कथा पुरान जान कर लोभ बड़ाई।
अरे हाँरे तुलसी कुटँब काज पचमरे।
पेट भर साँच न आई।। २ ।।

।। अड़ियल २८ ।।

ब्रह्मा बिश्नु महेश शेष सब बाँधे तानी।
नारद सुखदेव ब्यास फाँस कर डारे खानी।। १ ।।
हनूमान और जनक भभीषन बचे न भाई।
अरे हाँरे तुलसी ऋषी मुनी को गिने।
काल धर सबको खाई।। २ ।।

।। अड़ियल २९ ।।

जम है बड़ा कराल चाल कोइ लखे न भाई।
जब कर बाँधे हाथ संत बिन कौन छुड़ाई ।। १ ।।
बड़े कहो भगवान ताहि को मार गिराया ।
अरे हाँरे तुलसी राम कृष्ण औतार दसो नहिं बचने पाया।। २ ।।

।। अड़ियल ३० ।।

संत सरन जो पड़ा ताहि का लगा ठिकाना।
और कहूँ नहिं कुशल सकल बैराट चबाना।। १ ।।
काल संत से डरे सीस चरनन पर डारा।
अरे हाँरे तुलसी बिना संत नहिं ठौर।
और कहुँ नाहिं उबारा।। २ ।।

* * * * *

॥ कुण्डलिया ३१ ॥

यह तन दुरलभ देव को, सब कोइ कहत पुकार।। टेक ।।
सब कोइ कहत पुकार, देव देही नहीं पावें।
ऐसे मूरख लोग, स्वर्ग की आस लगावें।। १ ।।
पुन्य छीन सोइ देव, स्वर्ग से नर्क में आवें।
भरमें चारो खान, पुन्य कह ताहि रिझावें।। २ ।।
तुलसी तन मन तत्त लखे, स्वर्ग पर करे खखार।
यह तन दुरलभ देव को, सब कोइ कहत पुकार।। ३ ।।

॥ झूलना ३२ ॥

सुन ज्ञान के मान से खान पड़े, मन दासता होय सो पावता है।।१।।
पढ़ जान के नीच निहार लखे, सोइ ज्ञान का मूल कहावता है।।२।।
तुलसीदास जग आस को दूर करे,सोई संत की बात चित लावता है।।३।।

॥ झूलना ३३ ॥

वेदान्त में ब्रह्म बखान कहे, बिन संत न हाथ कछु आवता है।।१।।
जड़ चीन्ह चेतन्य का भेद लखे, जड़ गाँठ खुले तब पावता है।।२।।
तुलसीदास आकाश के पार चढ़े, सोइ पूरन ब्रह्म कहावता ह।।३।।

॥ झूलना ३४ ॥

अरे संत सुपन्थ का अंत लखें,जोग ज्ञान में ध्यान नहिं आवता है।।१।।
अलक्ख ख़लक्क की गम्म नहीं, सो झलक्क पलक्क में पावता है।।२।।
तुलसीदास लखे कोइ सूर पियारा, स्रुत शब्द सिहार निहारता है।।३।।

॥ सवैया ३५ ॥

संत का भेद अभेद अपार, सो सार वहि वहि देश को जाने।। १ ।।
सूरत सैल से केल करे, सो अकेल अपेल की साख बखाने।। २ ।।
वेद पुरान नहीं मत ज्ञान, सो जोगी को ध्यान न पहुँचे निदाने।। ३ ।।
ताको कहे तुलसी बिधि खोल, सो संत बिना नहिं भेद पिछाने।। ४ ।।

॥ सवैया ३६ ॥

नर को यही ठाट बैराट बनो अस श्रीमत में कह्यो व्यास बखाना।।१।।
दुतिया असकंध में बूझ बिचार, नहीं कह्यो पूजन काठ पषाना।।२।।
गीता में भाष कही भगवान, सो धर्म तजा जिन मोहिं पिछाना।।३।।

पूरन ब्रह्म वेदांत कहे, तुहि आप अपनपो आप भुलाना।।४।।
पाहन पूजन जनम गयो, कुछ सूझ पड़ी नहिं लाभ न हाना।।५।।
आसा से जाय बसे जड़ में, जब अंत समय जड़ माहिं समाना।।६।।
वेद की रीत से प्रीत करी, कर्म कांड रचे बहु जनम सिराना।।७।।
यह तत ज्ञान कहे तुलसी, तैने पत्थर में परमेश्वर जाना।।८।।

।।कवित्त ३७ ।।

साध संत हैं अगाध, जीव जन्म जात बाद।
काल कर्म की उपाध, साध सुर्त को लगाय के।। १ ।।
कृष्ण क्रोड़न औतार, राम कोटिन भये छार।
बेद ब्रह्मा नहिं पार, मार मार लिये खाय के।। २ ।।
देवन में महादेव, विष्णु नहिं जाने भेव।
करत काल जाल सेव, बाँधे जम धाय के।। ३ ।।
संतन के बिना साथ, उबरे नहिं कोटि भाँत।
मारे जम जुगन लात, तुलसी तरसाय के।। ४ ।।

।। कवित्त ३८ ।।

साध संत से उपाध, रहत बेश्या के साथ।
बड़ा कुटिल है कुपाथ, चले पन्थ न निहार के।। १ ।।
करमन के मैले, और विष रस के पेले।
सो ऐसे हरामख़ोर दोज़ख़ में परत हैं।। २ ।।
देखत के नीके, और करनी के फीके।
सो काढ़ काढ़ टीके, उपद्रव को खड़े हैं।। ३ ।।
खोट मोट मानी, आठों गाँठ के हरामी।
सो ऐसे कुटिल कामी, काम रागहू से भरे हैं।। ४ ।।
देखत के ज्ञानी, कूर खान की निशानी।
अधम ऐसे अभिमानी, सो जान हान करत हैं।। ५ ।।
साँचे संसार लार, संतन से फेर फार।
तुलसी मुख परत छार, छली छिद्र भरे हैं।। ६ ।।

* * * * *

॥ शब्द ३६ ॥

पण्डित भल चारों बेद पढ़े ॥ टेक ॥
गीता ज्ञान भागवत बाँची, जहाँ मछली तहाँ लेत खड़े॥ १ ॥
कर अस्नान अचार रसोई, हाँड़ी भीतर हाड़ सड़े॥ २ ॥
भोजन कर जजमान जिमाये, दछिना कारन जाय अड़े॥ ३ ॥
बकरा मार भवानी पूजें, मूँड़ टका बिन गाज पड़े॥ ४ ॥
यह अनीत आसा तन खोया, पण्डित नर्क से नाहिं कढ़े॥ ५ ॥
चार बरन में ऊँच ठिकाना, जग में मोटे कहत बड़े॥ ६ ॥
ब्रह्म चीन्ह सोइ ब्राह्मण कहिये, ग़ज़ब जहन्नुम जाय गड़े॥ ७ ॥
तुलसी पाप पुन्य के मैले, दान धरम मद मोह मढ़े॥ ८ ॥

॥ शब्द ४० ॥

देखो नर नगर द्वारिका जावे, साँड़ दगन दगवावे॥ टेक ॥
ब्राह्मन जात बरन में ऊँचे, तन लै अगिन जरावे॥ १ ॥
छाप दिवाय लेत दोउ भुज पर, बादहिं जनम गँवावे॥ २ ॥
राम कृष्ण औतार करम बस, सो बुध रूप कहावे॥ ३ ॥
गोपिन साथ भाँति कर क्रीड़ा डुण्ड प्रत्यक्ष दिखावे॥ ४ ॥
अरजुन भक्त हिवारे गारे, ऊधो तप समझावे॥ ५ ॥
का वे गोपी लूटी निलज कर, अरजुन चाँप चढ़ावे॥ ६ ॥
थोथे बान भये सर केरे, शक्तिहीन गुहरावे॥ ७ ॥
ग़ैरत गोपी हाय कृष्ण कर, ताल तजे तन गावे॥ ८ ॥
जो जो उनके परम सनेही, सो सो सब दुख पावे॥ ९ ॥
आप करम बस काया धारी, और मुक्ति पहुँचावे॥ १० ॥
बालि हते तेहि बदला दीना, भाल लगी पग पावे॥ ११ ॥
मार्‍यो बान पदम चमकत में, छूटत प्रान गँवावे॥ १२ ॥
जो कोइ इष्ट करे उनहीं को, तुलसी कस कस भावे॥ १३ ॥
काल कराल कृष्ण औतारी, सब जग को धर खावे॥ १४ ॥

॥ शब्द ४१ ॥

भाई रे बद्रीनाथ नहिं जाना, जहाँ पाखँड पारस पखाना॥ टेक ॥
परबत भूमि कठिन पग छाले, बेहड़ बन दुख खाना॥ १ ॥
मंदिर मूरत रुचिर बनाई, पारस बरन बखाना॥ २ ॥

पण्डा भीख लेत सब जग से, सो जाँचत जजमाना।। ३ ।।
पूजा लोभ दरस के कारन, गढ़ि मूरत पुजवाना।। ४ ।।
हर पैरी हरद्वार न पावे, बाँध्यो घाट पखाना।। ५ ।।
सीढ़ी पर पानी न्हावन को बूड़त भेष निदाना।। ६ ।।
तन कर मरन मुक्ति कर जाने, बाँधे शास्त्र पुराना।। ७ ।।
परभी परम पुनीत बिचारे, कुंभ न परख पिछाना।। ८ ।।
पारस की प्रतिमा नित गावें, लोहा सँग सोन कहाना।। ९ ।।
पण्डन को लोहा न मयस्सर, सोन करत नित दाना।। १० ।।
यह सब काल छली बल बाज़ी, तीरथ बरत बखाना।। ११ ।।
झूंठी रचन रची जग माही, सब नर भरम भुलाना।। १२ ।।
तुलसी सतसंग परख शरीरा, गुरु बैराट बखाना।। १३ ।।
पिंड माहिं सब अंड समाना, सतगुरु शब्द लखाना।। १४ ।।

।। शब्द ४२ ।।

अगम नहिं गुरु बिन सूझ पड़े।। टेक ।।
चार बेद पढ़े पुरान अठारा, नौ षट खोज मरे।। १ ।।
ज्ञानी भये भरम नहिं छूटा, झूंठा बाद करे।। २ ।।
बीस बिस्वास आस करमन की, नहिं प्रण टेक टरे।। ३ ।।
काल सनाथी जुग जुग खावै, चर और अचर चरे।। ४ ।।
बिन सतसंग संत बिन बेड़ी बिकट को बिपत हरे।। ५ ।।
तज नित नेम अचार भार सिर, निर्मल धरन धरे।। ६ ।।
कहें गुरु शब्द अकास बास पर, सूरत गगन चढ़े।। ७ ।।
तन बैराट जीव तरे तुलसी, सहजे भौ उतरे।। ८ ।।

।। होली ४३ ।।

सतगुरु मोरी बाँह गहिया, चढ़ि जाऊँ अधर की अटारी अटा ।। टेक।।
करूँ फ़रियाद दाद सब सुनि हैं, जाय पडूँगी चरन गह पइयाँ ।
मोरी सहाय बनाय करेंगे, मार निकारे बिकार करइया ।
अमल अलख जब ज़ोर घटा ।। १ ।।
जब शरमाय हाय कर तोबा, तुम्हरी डगर हम नाहिं रुकइया ।
अब तकसीर माफ़ मेरी कीजे, तुम सतगुरु के हो पास जवइया।
हुकम ज़बर के अबर फटा ।। २ ।।

धाय चली सतगुरु को सँग ले, अलग भये मारग अटकइया ।
सब ही उपाध आदि की छूटी, लूटे सभी नये बाट चलइया ।
मैं सुमरन कर नाम रटा ।। ३ ।।
गगन गुफा में धसीरी बसी जब, आगे मिले मोहिं गैल बतइया ।
अंग लगाय संग कर लीन्ही, अगम अभय पद पार पठइया ।
जब तुलसी हिय हेर हटा ।। ४ ।।

।। लटका ४४ ।।

ब्याकुल बिरह दिवानी, झड़े नित नैनन पानी।। टेक ।।
हरदम पीर पिया की खटके, सुध बुध बदन हिरानी।। १ ।।
होश हवास नहीं कुछ तन में, बेदम जीव भुलानी।। २ ।।
बहु तरंग चित चेतन नाहीं, मन मुरदे की बानी।। ३ ।।
नाड़ी बैद बिथा नहिं जाने, क्यों औषध दे आनी।। ४ ।।
हिय में दाग़ जिगर के अंदर, क्या कहुँ दरद बखानी।। ५ ।।
सतगुरु बैद बिथा पहिचाने, बूटी है उनकी जानी।। ६ ।।
तुलसी यह रोग रोगिया बूझे, जिन को पीर पिरानी।। ७ ।।

।। लटका ४५ ।।

प्रीतम प्रीत पिरानी, दरद कोई बिरले जानी।। टेक ।।
डसत भुवंग चढ़त सनननन, ज़हर लहर लहरानी।। १ ।।
घनन घनन घन्नाटी आवे, भावे अन्न न पानी।। २ ।।
भँवर चक्र की उठत घुमेरें, फिरे दसो दिस आनी।। ३ ।।
अंदर हाल बिहाल हलावत, दुरगम प्रीत निभानी।। ४ ।।
आशिक़ इश्क इश्क आशिक से, करना मौत निशानी।। ५ ।।
मुरदा होकर ख़ाक मिले जब, तब पट अमर लिखानी।। ६ ।।
पिया को रोग सोग तन मन में, सतगुरु सुध अलगानी।। ७ ।।
तुलसी यह मारग मुश्किल का, धड़ बिन सीस बिकानी।। ८ ।।

।। बारहमासा लावनी ४६ ।।

अली असाढ़ के मास बिरह उठ बादल घहराने। चहुँदिस चमकै बीज बिकल पिया के बिन हैराने।। ख़बर बिन धीरज नहिं आवे। तन मन बदन बेहाल बिपत में नहिं कोइ कुछ भावे ।।

कहूँ नहिं दिल दारुन अटके। हरदम पिया की पीर दरस बिन मन मोरा भटके ।। १ ।।

सखी सावन के मास शोक में सुन्दर घबरानी। रिमझिम बरसै मेह मोर दादुर की सुन बानी।। जिगर अंदर जिव लहरावै। तड़पै तन के माहिं हाय पिया खोजें कहाँ पावै।। रही हिया में पिया को रटके। हरदम पिया ०।। २ ।।

भर भादों झड़ मेघ अखंडित बरसै जल धारा। आवे पिया की पीर नीर नैनों बहै जलधारा।। सुरख सब अँखियन में लाली। मारे गोसा तान तीर हिये ज्यों कसके भाली।। कलेजे अन्दर में खटके। हरदम पिया ०।। ३ ।।

ऋतु कुआर के मास आस कागा सँग सुध बिसरी। हंस सिरोमन मूल भूल से तज मेवा मिसरी।। मरम संगत बिन कहँ पाऊँ। बिन सतगुरु के बाट घाट घर चढ़ कैसे जाऊँ।। सुरत मन क्यों करके लटके। हरदम पिया ०।। ४ ।।

कातिक तिल के माहिं जाइ सोइ सुध बुध दरसावे। अष्ट कँवल दल द्वार पार पद हद सब समझावे।। सरन होय सतगुरु की चेली। मैली बुद्धी निकार सार पावे जब लख हेली ।। चाँदनी हियरे में छिटके । हरदम पिया ० ।। ५ ।।

अघ अघहन के मास पाप पुन सब जब जल जावे। निर्मल नीर बनाय जाय सोइ तिरबेनी न्हावे ।। करम के भोग भरम छूटैं । बिन बेनी अस्नान पकड़ जम धर धर के लूटें।। बचै नहिं कोइ सब को पटके। हरदम पिया ० ।। ६ ।।

पूस पुरुष की आस बास नहिं जिव निस्तारा । सतगुरु खेवट गैल गवन कर जब जावे पारा।। मिलें जब पिउ परसै प्यारी । सुन्दर सेज बिछाय पिया सँग सोवे कर यारी।। अरज कर प्रीतम से हटके। हरदम पिया ० ।। ७ ।।

माघ मनोरथ प्रीत परम पद की सुध सम्हारी । ऐसी होय कोइ नारि जगत तज तन मन से न्यारी।। सुरत की डोरी लौ लावे। मूल मुकर की राह दाव कर सहजहि चढ़ जावे।। कुमति कुनबे की बुधि झटके। हरदम पिया ० ।। ८ ।।

फागुन फ़रक निकार यार सँग खेलै खुल होली । आस अबीर उड़ाय गुनन की भर मारे झोली ।। अरगजा घिस चन्दन लेपै । नील सिखर की राह सुरत चढ़ सुन्दर में चेपै ।। चरन में हित चित से गटके। हरदम पिया ० ।। ९ ।।

चतुर सहेली चेत हेत हियरे से मन लावै । पल पल पाले प्रीत रीत पिया को जो रस चावै ।। अमल कर होवै मतवारी । नशा नैन के माहिं बिसर गइ सुध बुध सब सारी ।। गरक़ डोरी बाँधे बटके। हरदम पिया ० ।। १० ।।

बुन्द बैसाख की साख सिन्ध गत संतन ने गाई । सुन के सज्जन होय समझ कर छाँड़े चतुराई।। दीन दिल दुर्मत को छोड़े। मन मकरन्द को जान मान तन मन को सब तोड़े।। लहर सतसँग की जब चटके। हरदम पिया ० ।। ११ ।।

ज़बर जेठ की रीत करे कोई किंकर जब होवे । मन के बिषम बिकार काढ़ के तुलसी सब धोवै ।। भरम तज भक्ति भजन करना । मन मूरख को बाँध पकड़ कर जीवत ही मरना ।। निकल घट न्यारी होय फटके । हरदम पिया की पीर दरस बिन मन मोरा भटके ।। १२ ।।

।। लावनी ४७ ।।

पिया दरस बिना दीदार दरद दुख भारी । बिन सतगुरु के धृग जीवन संसारी ।। टेक ।।

क्या जनम लिया जग माहिं मूल नहिं जाना । पूरन पद को छाँड़ किया ज़ुलमाना ।। जुग जुग में जीवन मरन आज नर देही। सुख सम्पति में पार पुरुष नहिं सेई।। जग में रहना दिन चार बहुर मरना री । बिन सतगुरु के धृग जीवन संसारी ।। १ ।।

यह नर तन दुर्लभ माहिं हाय नहिं लाई । जाले अँखिया में पड़े करम दुखदाई ।। पिया है हर दम हिय माहिं परख नहिं पाई । बिन सतगुरु कहो कौन कहे दरसाई ।। खोजत रही री दिन रात ढूँढ़ कर हारी। बिन सतगुरु के ० ।। २ ।।

अरी यह मिट्टी तन साज समझ बिनसेगा । छिन में छूटे बदन काल गिरसेगा ।। आसा बंधन जग रोज़ जनम धरना री । यह दुख सुख बेड़ी विषम भोग करना री ।। भुगते चौरासी खान जुगन जुग

चारी । बिन सतगुरु के ० ।। ३ ।।

सुत मात पिता नर पुरुष जगत का नाता। यह सब संशय का कोट कुटम दुख दाता।। टुक जीवन है जग माहिं काल की बाज़ी। इन बातों में परम पुरुष नहिं राज़ी।। पिउ परमारथ सँग साथ सहज तरना री । बिन सतगुरु के ० ।। ४ ।।

कोइ भेटें दीन दयाल डगर बतलावें । जेहि घर से आया जीव तहाँ पहुँचावें ।। दरशन उनके उर माहिं करें बड़भागी। उनके तरने की नाव किनारे लागी ।। कहिं वे दाता मिल जाँय करें भौ पारी । बिन सतगुरु के ० ।। ५ ।।

सतसँग करना मन तोड़ सरन संतन की । अंदर अभिलाषा लगी रहे चरनन की ।। सूरत तन मन से साँच रहे रस पीती । कोइ जावे सज्जन कुफ़र काल को जीती । अमृत हर दम कर पान चुए चोधारी । बिन सतगुरु के ० ।। ६ ।।

सतसँग मारग की प्रीत रीत जिन जानी । उन सज्जन पर हूँ बार बार कुरबानी। निस दिन लौ लागी रहे रमक रस राती। मतवारी मज्जन मुकर मनोरथ माती। ऐसे जिनके सरधान सुरत बलिहारी ।। बिन सतगुरु के ० ।। ७ ।।

अलि जो समरथ के साथ सरन में आई । सो सूरत परम बिलास करे घट माहीं ।। पिउ प्यारी महल मिलाप रहे दिन राती । तुलसी पट भीतर केल करे पिया साथी ।। सुख सम्पति क्या कहुँ चैन चरन पर वारी । बिन सतगुरु के धृग जीवन संसारी ।। ८ ।।

।। शब्द ४८ ।।

पढ़े क्या बाँच रे तेरे अन्दर उपजी न साँच।। टेक ।।
पढ़ गुन सोध भागवत गीता, फिर जजमाने जाँच रे।। १ ।।
नेमी नेम प्रेम रुपयन से, ज्यों कसबिन को नाच रे।। २ ।।
पूरन होत कथा जब ऐसे, सब जुड़ बैठे पाँच रे।। ३ ।।
करत बिचार दंड राजन ज्यों, लूट जगत में गाछ रे।। ४ ।।
मोट ग़रीब ग़रज़ लेने से, सुथरे दरस न आँच रे।। ५ ।।
पंडित मुक्ति करें यों तुलसी, सो जग झूठे साँच रे।। ६ ।।

* * * * *

।। शब्द ४९ ।।

भौजल लहर उतंग संग कोइ खोजो रे खोजो।। टेक ।।
शिव सनकादि आदि मुनि नारद, सारद शेष कुरंग।
ब्यासदत्त सुकदेव दिवाने, पावत फिर फिर अंग।। १ ।।
श्रृंगी ऋषि पारासर मारे, कीन काम ने तंग।
ऋषी मुनी सब क्रोध कुबुद्धी, भयो तपस्या भंग।। २ ।।
ब्रह्मा बिष्नु दसो औतारा, खुल खुल नच्यो अपंग।
और जगत जिव कहँ लग बरनूँ, आसा रंग तरंग।। ३ ।।
तुलसी ताव दाव नर देही, सुरत गगन चढ़ गंग।
गुंजत भँवर फूल फुलवारी, कँवल अधर लख भृंग।। ४ ।।

।। शब्द ५० ।।

गति को लखी पावे संत की ।। टेक ।।
लखन अरूप रूप दरसावत, अगम सुनावत अन्त की।। १ ।।
तूल मूल अस्थूल लखावत, ख़बर जनावत कन्त की।। २ ।।
दृढ़ कर डगर डोर समझावत, तुरत सुझावत पंथ की।। ३ ।।
भव भुवंग तज पार चढ़ावत, सत मत नाव अतंत की।। ४ ।।
भेष भये सब साध कहावत , भाषत साख जो ग्रन्थ की।। ५ ।।
शिष्य करें गुरु घाट न जानें, तुलसी नहिं गति होत महंत की।। ६ ।।

* * *

गुरु नानक के शब्द

।। शब्द पहिला ।।

जगत में झूठी देखी प्रीत ।। टेक ।।
अपने ही सुख को सब लागे, क्या दारा क्या मीत।। १ ।।
मेरो मेरो सबहि कहत हैं, हित से बाँध्यो चीत।। २ ।।
अंतकाल संगी कोइ नाहीं, यह अचरज है रीत।। ३ ।।
मन मूरख अजहूँ नहिं समझत, सिख दे हारो नीत।। ४ ।।
नानक भवजल पार परे, जो गावे गुरु को गीत।। ५ ।।

।। शब्द दूसरा ।।

सब कुछ जीवत को ब्यवहार ।। टेक ।।

मात पिता भाई सुत बन्धु औ पुनि गृह की नार।। १ ।।
तन तें प्रान होत जब न्यारे, टेरत प्रेत पुकार।। २ ।।
आध घड़ी कोऊ नहिं राखत,घर तें देत निकार।। ३ ।।
मृगतृष्णा ज्यों जग रचना है, देखो ह्रदय बिचार।। ४ ।।
कहे नानक भज सतनाम नित, जा तें होय उधार।। ५ ।।

।। शब्द तीसरा ।।

रे मन यह साँची जिय धार ।। टेक ।।

सकल जगत है जैसे सुपना, बिनसत लगे न बार।। १ ।।
बालू भीत बनाई रच पच, रहत नहीं दिन चार।। २ ।।
तैसे ही यह सुख माया को, उरझो कहा गँवार।। ३ ।।
अजहुँ समझ कुछ बिगड़ो नाहिन, भजले गुरु करतार।। ४ ।।
कहे नानक निज मत साधन को, भाख्यो तोहि पुकार।। ५ ।।

।। शब्द चौथा ।।

प्रीतम जान लेव मन माहीं ।। टेक ।।

अपने सुख में सब जग फाँस्यो, कोइ काहू को नाहीं।। १ ।।
सुख में आन बहुत मिल बैठत,रहत चहूँ दिस घेरे।। २ ।।
बिपत पड़े सब ही सँग छाँड़त, कोऊ न आवत नेरे।। ३ ।।
घर की नार बहुत हित जासे, रहत सदा सँग लागी।। ४ ।।
जब यह हंस तजी है काया, प्रेत प्रेत कर भागी।। ५ ।।
या बिधि को ब्यवहार बन्यो है, तासो नेह लगायो।। ६ ।।
अन्त बार नानक बिन सतगुरु, कोऊ काम न आयो।। ७ ।।

।। शब्द पाँचवाँ ।।

प्रानी सत्तनाम सुध लेह ।। टेक ।।

छिन छिन अवधि घटत निस बासर, बिनस जात झूठी यह देह।
तरुनापा विषयन सँग खोयो, बालपना अज्ञाना।
बृद्ध भयो अजहूँ नहिं समझे, कौन कुमति उरझाना।। १ ।।
मानुष जनम दियो जिस करते, सो तैं क्यों बिसरायो।
मुक्ति होत नर जाके सुमिरे, ताको निमिष न गायो।। २ ।।

माया को मद कहा करत है, संग न काहू जाई।
नानक कहत चेत चिन्तामनि, होइ है अन्त सहाई।। ३ ।।

।। शब्द छठवाँ ।।

गुरु बिन तेरो कोइ न सहाई।। टेक ।।
काकी मात पिता सुत बनिता, को काहू का भाई।। १ ।।
धन धरनी और संपति सगरी, जो मान्यो अपनाई।। २ ।।
तन छूटे कुछ संग न जाई, कहा ताहि लिपटाई।। ३ ।।
दीन दयाल सदा दुख भंजन, तासों रुचि न बढ़ाई।। ४ ।।
नानक कहत जगत सब मिथ्या, ज्यों सुपने रैनाई।। ५ ।।

।। शब्द सातवाँ ।।

उघरा वह द्वारा वाह गुरू परिवारा ।। टेक ।।
चढ़ गई चंग पतंग संग ज्यों, चंद चकोर निहारा।। १ ।।
सूरत शोर ज़ोर ज्यों खोलत, कुंजी कुलफ केवाड़ा।। २ ।।
सूरत धाय धसी ज्यों धारा, पैठ निकस गइ पारा।। ३ ।।
आठ अटा की अटारि मँझारा, देखा पुरुष नियारा।। ४ ।।
निराकार आकार न जोती, नहिं जहाँ बेद बिचारा।। ५ ।।
ओंकार करता नहिं कोई, नहिं व्हाँ काल पसारा।। ६ ।।
वह साहिब सब संत पुकारें, और पाखंड पसारा।। ७ ।।
सतगुरु चीन्ह दीन्ह यह मारग, नानक नज़र निहारा।। ८ ।।

।। शब्द आठवाँ ।।

मन मुख मन्न अजित्त है, दूजे लग्गे जाय।। १ ।।
तिसनूँ सुख सपने नहीं, दुक्खे दुक्ख बिहाय।। २ ।।
घर घर पढ़ पढ़ पण्डित थाके सिद्ध समाध लगाय।। ३ ।।
यह मन बस्स न आवई, थक्के करम कमाय।। ४ ।।
भेषधारी भेष कर थक्के, अठसठ तीरथ न्हाय।। ५ ।।
मन को सार जानी नहीं, हौं मैं भरम भुलाय।। ६ ।।
गुरु परशादी भौ पया, बड़भागी बस्या मन आय।। ७ ।।
भौ पये बस मन भया, हौं मैं शब्द जलाय।। ८ ।।

सच्च रते से निरमले, जोती जोत मिलाय।। ९ ।।
सतगुरु मिलिय नाम पाइया, नानक सुक्ख बसाय।। १० ।।

।। शब्द नवाँ ।।

तूँ सुमिरन कर ले मेरे मनाँ, तेरी बीती जात उमर गुरु नाम बिना।
पंछि पंख बिन, हस्ति दंत बिन, नारी पुरुष बिना रे।। १ ।।
बेश्या को पुत्र पिता बिन हीना, तैसे प्रानी गुरु नाम बिना रे।। २ ।।
देह नैन बिन रैन चंद बिन, धरती मेघ बिना रे।। ३ ।।
जैसे पंडित बेद बिहीना, तैसे प्रानी गुरु नाम बिना रे।। ४ ।।
कूप नीर बिन, धेनु छीर बिन, मन्दिर दीप बिना रे।। ५ ।।
जैसे तरवर फल कर हीना, तैसे प्रानी गुरु नाम बिना रे।। ६ ।।
तू काम क्रोध मद लोभ निवारो, छाँड़ो क्रोध अब संत जना रे।। ७ ।।
कहें नानकशाह सुनो भगवंता, या जग में कोइ नहिं अपना रे।। ८ ।।

।। शब्द दसवाँ ।।

नहिं ऐसा जनम बारंबार ।। टेक ।।
का जानी कुछ पुन्य प्रगटो तेरो मानुषा अवतार।। १ ।।
घटत छिन २ बढ़त पल २ जात न लागत बार।। २ ।।
बृक्ष तें फल टूट परि हैं, बहुर न लागत डार।। ३ ।।
बैर वाले सम्हार तन को बिषम ऐंड़ी धार।। ४ ।।
बेड़ा बाँधो सुरत को चलि उतरो भौजल पार।। ५ ।।
काम क्रोध हंकार तृष्णा तजहु सकल बिकार।। ६ ।।
दास नानक मान लीजो नाम को आधार।। ७ ।।

।। शब्द ग्यारहवाँ ।।

काहे रे बन खोजन जाई ।। टेक ।।
सर्व निवासी सदा अलेषा, तो सँग रहत सदाई।। १ ।।
पुहुप मध्य जैसे बास रहत है, मुकुर माहिं जैसे छाईं।। २ ।।
तैसे ही गुरु बसत निरन्तर, घटहि में खोजो भाई।। ३ ।।
बाहर भीतर एकै मानो, यह गुरु ज्ञान बताई।। ४ ।।
कहे नानक बिन आपा चीन्हे, मिटै न भ्रम की काई।। ५ ।।

* * * * * *

॥ शब्द बारहवाँ ॥

साधो यह मन गह्यो न जाई ॥ टेक ॥
चंचल तृष्णा संग बसत है, यातें मन न थिराई॥ १ ॥
कठिन क्रोध घट ही के भीतर, या बिधि सब बिसराई॥ २ ॥
रतन ज्ञान सब को हर लीन्हा, तातें कछु न बसाई॥ ३ ॥
जोगी जतन करत सब हारे, गुनी रहे गुन गाई॥ ४ ॥
जब नानक गुरु भये दयाला, तो सब बिधि बनि आई॥ ५ ॥

॥ शब्द तेरहवाँ ॥

मन मुख लहर घर तज्ज बिगुच्चे, औरों के घर हेरे।
गृह धर्म गँवाये सतगुरु नहिं भेटे दुर्मति घुम्मण घेरे॥
दिशन्तर भवें पाठ पढ़ थाका, तृष्णा होय बधेरे।
काँची पिंडी शब्द न चीन्हें, उदर भरे जैसे ढोरे॥
बाबा ऐसो रमत रमें सन्यासी, गुरु के शब्द एक लिव लागी॥
तेरे नाम रते तृप्तासी॥ १ ॥
घोली गेरू रंग चढ़ाया, बस्तर भेष भिषारी।
कापड़ फाड़ बनाई खिंथा, झोली माया धारी॥ २ ॥
घर घर माँगे जग परबोधे, मन अन्धे पति हारी।
मरम भुलाना शब्द न चीन्हे, जुए बाज़ी हारी॥ ३ ॥
अन्तर अगिन न गुरु बिन बूझे, बाहर फूहर तापे।
गुरु सेवा बिन भक्ति न होई, क्योंकर चीन्हसि आपे॥ ४ ॥
निन्दा कर कर नर्क निवासी, अंतर आतम जापे।
अठसठ तीरथ भरम बिगूचे, क्यों मल धोये पापे॥ ५ ॥
छानी ख़ाक भभूत चढ़ाई, माया का मग जोहै।
अंदर बाहर एक न जाने, साँच कहे तो छोहै॥ ६ ॥
पाठ पढ़े मुख झूठों बोले, निगुरे की मत ओ है।
नाम न जपई क्यों सुख पावे, बिन नामें क्यों सोहै॥ ७ ॥
मूँड़ मुड़ाय जटा शिष बाँधी, मौन रहे अभिमाना।
मनुवाँ डोले दह दिस धावे, बिन रत आतम ज्ञाना॥ ८ ॥
अमृत छोड़ महा बिष पीवे, माया का दीवाना।
किरत न मिटई हुकम न बूझे, पशुवाँ माहिं समाना॥ ९ ॥

हाथ कमंडल कापड़िया, मन तृष्णा उपजी भारी।
इस्त्री तज कर काम बियापा, चित लाया पर नारी।। १० ।।
शिष्य करे पर शब्द न चीन्हे, लम्पट है बाजारी।
अंतर बिष बाहर नभ राती, ता जम करे खुवारी।। ११ ।।
सो सन्यासी जो सतगुरु सेवे, बिच्चों आप गँवाये।
छाजन भोजन की आस न करही, अचिंत मिले सो खाये।। १२ ।।
बके न बोले छिमा धन संग्रह, तामस नाम जलाये।
धन गिरही सन्यासी जोगी, जो गुरु चरनी चित लाये।। १३ ।।
आस निरास रहे सन्यासी, एकस सों लिव लाये।
शब्द रस पीवे तो शांति आवे, निज घर ताड़ी लाये।। १४ ।।
मनुवाँ न डोले गुरुमुख बूझे, धावत बरज रहाये।
गृह शरीर गुरु मत्ती खोजे, शब्द पदारथ पाये।। १५ ।।
ब्रह्मा बिश्नु महेश श्रेष्ठ सब, रहे नाम बिचारी।
खानी बानी गगन पताली, जन्ताँ जोत तुम्हारी।। १६ ।।
शब्द बिना नहिं छूटस नानक, साँची तर तू तारी।
सब सुख मुक्त शब्द धुन बानी, सच्च नाम उर धारी।। १७ ।।

* * * * *

दादू साहब के शब्द

।। शब्द पहिला ।।

दादू जानै न कोई संतन की गति गोई ।। टेक ।।
अवगति अंत अन्त अन्तर पट, अगम अगाध अगोई।। १ ।।
सुन्नी सुन्न सुन्न के पारा, अगुन सगुन नहिं दोई।। २ ।।
अण्ड न पिण्ड खण्ड ब्रह्मण्डा, सूरत सिंध समोई।। ३ ।।
निराकार आकार न जोती, पूरन ब्रह्म न होई।। ४ ।।
उनको पार सार सोइ पइहै, मन तन गति पति खोई।। ५ ।।
दादू दीन लीन चरनन चित, मैं उनकी सरनोई।। ६ ।।

।। शब्द दूसरा ।।

दादू देखा दीदा सब कोइ कहत शुनीदा।।टेक ।।
हवा हिरस अन्दर बस कीदा, तब यह दिल भया सीधा।। १ ।।
अनहद नाद गगन गढ़ गरजा, तब रस खाया अमीदा।। २ ।।

सुखमन सुन्न सुरत महलन में, आया अजर अक़ीदा।। ३ ।।
अष्ट कँवल दल दृग में दर्शन, पाया खुद्द खुदीदा।। ४ ।।
जैसे दूध दूध दधि माखन, बिन मथे भेद न घी दा।। ५ ।।
ऐसे तत्त मत्त सत साधन, तब टुक नशा पिया पीदा।। ६ ।।
नहिं वह जोग ज्ञान मुद्रा तत, यह गत और पदीदा।। ७ ।।
जो कोइ चीन्ह लीन यह मारग, कारज हो गया जीदा।। ८ ।।
मुरशिद सत्त गगन गुरु लखिया, तन मन कीन उसीदा।। ९ ।।
आशिक यार अधर लख पाया, हो गया दीदम दीदा।। १० ।।

।। शब्द तीसरा ।।

जानै अंतरजामी अचरज अकथ अनामी।। टेक ।।
नौलख कँवल जुगल दल अन्दर द्वादस साहिब स्वामी।। १ ।।
सूरत कड़क कँवल दल नभ पर, झटक झटक थिरथामी।। २ ।।
सूरत शब्द शब्द में सूरत, अगम अगोचर धामी।। ३ ।।
कासे कहों पिया सुख सारा, ज्यों तिरिया मुसकानी।। ४ ।।
नहिं यह जोग ज्ञान तुरिया तत, यह गति अकह कहानी।। ५ ।।
चन्द न सूर पवन नहिं पानी, क्योंकर करूँ बखानी।। ६ ।।
सुन्न न गगन धरनि नहिं तारा, अल्लाह रब नहिं रामी।। ७ ।।
कहा कहूँ कहिवे की नाहीं, जानत सन्त सुजानी।। ८ ।।
बेद न भेद भेष नहिं जानत, कोऊ देत न हामी।। ९ ।।
दादू दृग दीदार हिये के, सूरत करत सलामी।। १० ।।
मैं पिय प्यारी प्यारे पिया अपने, मिल रहे एक ठिकानी।। ११ ।।
सूरत सार सिन्ध लख पाई, यह गति बिरले जानी।। १२ ।।

।। शब्द चौथा ।।

दादू दरस दिवाना आरसी यार दिखाना।। टेक ।।
आधी रात गगन मध चन्दा, तारा खिलत खिलाना।। १ ।।
चटकी सुरत चढ़ी ज्यों चकरी, फूट गया अस्माना।। २ ।।
लौ लगी जाय महल मध ऊपर, सूरत निरत ठिकाना।। ३ ।।
मिल गया यार प्यार बहु कीन्हा, खुल गया अर्श निशाना।। ४ ।।
आदि अन्त देखा मध म्याना, क्योंकर करूँ बखाना।। ५ ।।
गुप्त बात गुप्तहि भई ग़ाफ़िल, अन्दर माहिं छिपाना।। ६ ।।

मैं कुछ कीन्ह लीन्ह सोइ जानत, और कहूँ नहिं चीन्हा।। ७ ।।
दादू पीर मिटी परलय की, जनम मरन नहिं माना।। ८ ।।

।। शब्द पाँचवाँ ।।

दादू दिल बिच देखा रूप रंग नहिं रेखा।। टेक ।।
हद हद बेद कितेब बखाने, मैं कहा बेहद लेखा।। १ ।।
मुल्ला शेख़ पण्डित और सइयद, यह मुए अपनी टेका।। २ ।।
राम रहीम करीम न केशो, हरि हज़रत नहिं एका।। ३ ।।
वह साहिब सबहिन से न्यारा, कोइ कोइ संतन देखा।। ४ ।।
दादू दीन लीन होय पाया, क्या कहुँ अगम अलेखा।। ५ ।।
जिन २ जाना तिन्ही पिछाना, मिट गया मन का धोखा।। ६ ।।

।। शब्द छठवाँ ।।

मेरे तुम हीं राखनहार दूजा कोई नहीं।
यह चंचल चहुँ दिस जाय काल तहीं तहीं।। १ ।।
मैं बहुतक किये उपाय निश्चल ना रहे।
जहाँ बरजूँ तहाँ जाय मद माता बहे।। १ ।।
जहाँ बरजूँ तहाँ जाय तुम से ना डरे।
तासे कहा बसाय भाव त्यों करे।। ३ ।।
सकल पुकारे साध और मैं केता कहा।
गुरु अंकुश माने नाहिं निरभय हो रहा।। ४ ।।
मेरे तुम बिन और न कोय जो इस मन को गहे।
तुम राखो राखनहार दादू तो रहे।। ५ ।।

।। शब्द सातवाँ ।।

तू स्वामी मैं सेवक तेरा, भावे सिर दे सूली मेरा।। १ ।।
भावें करवत सिर पर सार, भावें लेकर गरदन मार।। २ ।।
भावें गिरवर गगन गिराय, भावें दरिया माहिं बहाय।। ३ ।।
भावें चहुँ दिस अगिन लगाय,भावें काल दसो दिस खाय।। ४ ।।
भावें कनिक कसौटी देय, दादू सेवक कस कस लेय।। ५ ।।

* * * * *।

।। शब्द आठवाँ ।।

दादू देखा मैं प्यारा अगम जो पंथ निहारा।। टेक ।।
अष्ट कँवल दल सुरत शब्द में, रूप रंग से न्यारा।। १ ।।
पिंड ब्रह्मण्ड और बेद कितेबे, पाँच तत्त के पारा।। २ ।।
सत्तलोक जहँ पुरुष बिदेही, वह साहिब करतारा।। ३ ।।
आदि जोत और काल निरंजन, इनका वहाँ न पसारा।। ४ ।।
राम रहीम रब्ब नहिं आतम,मोहमद नहिं औतारा।। ५ ।।
सब संतन के चरन सीस धर, चीन्हा सार असारा।। ६ ।।

।। शब्द नवाँ ।।

दादू भेष भुलाना जग संग कीन्ह पयाना।। टेक ।।
षट दर्शन पंडित और ज्ञानी, पढ़ पढ़ हुए पुराना।। १ ।।
परमहंस जोगी संन्यासी, बेद करत परमाना।। २ ।।
आतम ब्रह्म कहें अपने को, सब में हमीं समाना।। ३ ।।
तासे भवजल पार न पावें, अहं ब्रह्म को माना।। ४ ।।
मन बिहंग की ख़बर न जाना, तन बिहंग है बाना।। ५ ।।
जग जज्ञास मोह मद माते, तामें बहु लिपटाना।। ६ ।।
जाको भेद बेद नहिं पावे, अगम पंथ नहिं जाना।। ७ ।।

।। शब्द दसवाँ ।।

दादू दीन अवाजा, जग जिव भेष न लाजा।। टेक ।।
शिव सनकादि श्रंगी पाराशर, इन का सरो न काजा।। १ ।।
यह तन तोर काल का खाजा, छिन छिन सिर पर गाजा।। २ ।।
सुखदेव ब्यास जनक नारद मुनि, घट घट उन पर छाजा।। ३ ।।
तूँ केहि लेखे माहिं न बचिहै, पच पच मरत अकाजा।। ४ ।।
बाघ उपाय करे गउ कारन, जम दल यहि बिधि साजा।। ५ ।।
पल में छुट जैहै सुख संपत, ज्यों माखी मधु राजा।। ६ ।।
रात दिवस धावे धन कारन, मरन काल कित आजा।। ७ ।।
जिन कोइ सुरत सत्त लख चीन्हा, जनम मरन भव भाजा।। ८ ।।
दादू भेद भेष जब छूटे, सूरत शब्द समाजा।। ९ ।।

॥ शब्द ग्यारहवाँ ॥

दादू कहत पुकारी, कोइ माने नाहिं हमारी॥ टेक ॥
पंडित क़ाज़ी बेद कितेबे, पढ़ पढ़ मुए लबारी॥ १ ॥
वे तीरथ वे हज को जाते, बूड़े भवजल धारी॥ २ ॥
ईसाई सब धोखा खाया, पढ़ पढ़ अंजील बिचारी॥ ३ ॥
हिंदू तुरुक इसाई तीनों, करम धरम पच हारी॥ ४ ॥
नूर ज़हूर खुदा हम पाया, उतरे भव जल पारी॥ ५ ॥

॥ शब्द बारहवाँ ॥

दादू दुनिया दिवानी पूजै पाहन पानी ॥ टेक ॥
गढ़ मूरत मंदिर में थापी, निव निव करत सलामी॥ १ ॥
चंदन फूल अच्छत शिव ऊपर, बकरा भेंट भवानी॥ २ ॥
छप्पन भोग लगे ठाकुर को, पावत चेत न प्रानी॥ ३ ॥
धाय धाय तीरथ को धावें, साध संग नहिं मानी॥ ४ ॥
तातें पड़े करम बस फंदे, भरमे चारो खानी॥ ५ ॥
बिन सतसंग सार नहिं पावें, फिर फिर भरम भुलानी॥ ६ ॥

* * * * *

पलटू साहब की कुण्डलियाँ

॥ १ ॥

कमठ दृष्ट जो लावई सो ध्यानी परमान॥ टेक ॥
सो ध्यानी परमान सुरत से अण्डा सेवे।
आप रहे जल माहिं सूखे में अण्डा देवे॥ १ ॥
जस पनहारी कलस धरे मारग में आवे।
कर छोड़े मुख बचन चित्त कलसा में लावे॥ २ ॥
फनि मनि धरे उतार आप चरने को जावे।
वह नहिं ग़ाफिल पड़े सुरत मनि माहिं रहावे॥ ३ ॥
पलटू कारज सब करे सुरत रहे अलगान।
कमठ दृष्ट जो लावई सो ध्यानी परमान॥ ४ ॥

* * * * *

॥ २ ॥

दीपक बारा नाम का महल हुआ उजियार।। टेक ।।
महल हुआ उजियार नाम का तेज बिराजा।
शब्द किया परकाश मानसर ऊपर छाजा।। १ ।।
दसों दिसा भई सुद्ध बुद्ध भइ निरमल साँची।
छूटि कुमति की गाँठ सुमति परघट होय नाची।। २ ।।
होत छतीसों राग दाग़ तिरगुन का छूटा।
पूरन प्रगटे भाग करम का कलसा फूटा।। ३ ।।
पलटू अँधियारी मिट गई बाती दीन्ही टार।
दीपक बारा नाम का महल हुआ उजियार।। ४ ।।

॥ ३ ॥

बंसी बाजी गगन में मगन भया मन मोर।। टेक ।।
मगन भया मन मोर महल अठवें पर बैठा।
जहाँ उठे सोहंगम शब्द शब्द के भीतर पैठा।। १ ।।
नाना उठें तरंग रंग कुछ कहा न जाई।
चाँद सुरज छिप गये सुखमना सेज बिछाई।। २ ।।
छूट गया तन ग्रेह नेह उनही से लागी।
दसवाँ द्वारा फोड़ जोत बाहर होय जागी।। ३ ।।
पलटू धारा तेल की मेलत हो गया भोर।
बंसी बाजी गगन में मगन भया मन मोर।। ४ ।।

॥ ४ ॥

धुबिया फिर मर जायगा चादर लीजे धोय।। टेक ।।
चादर लीजै धोय मैल है बहुत समानी।
चल सतगुरु के घाट भरा जहाँ निर्मल पानी।। १ ।।
चादर भई पुरानी दिनों दिन वार न कीजै।
सतसंगत में सौंद ज्ञान का साबुन दीजै।। २ ।।
छूटै तिरगुन दाग़ नाम का कलप लगावे।
चलिये चादर ओढ़ बहुर नहिं भवजल आवे।। ३ ।।
पलटू ऐसा कीजिये मन नहिं मैला होय।
धुबिया फिर मर जाएगा चादर लीजै धोय।। ४ ।।

॥ ५ ॥

मन महीन कर लीजिये जब पिउ लागें हाथ॥ टेक ॥
जब पिउ लागें हाथ नीच होय सब से रहना।
पच्छा पच्छी को त्याग ऊँच बानी नहिं कहना॥ १ ॥
मान बड़ाई खोय ख़ाक़ में जीते मिलना।
गाली कोइ दे जाय छिमा कर चुप हो रहना॥ २ ॥
सब की करे तारीफ़ आप को छोटा जानै।
पहले हाथ उठाय सीस पर सब को आनै॥ ३ ॥
पलटू वही सोहागिनी हीरा झलकै माथ।
मन महीन कर लीजिये जब पिउ लागें हाथ ॥ ४ ॥

॥ ६ ॥

धुआँ का सा धौरेहरा ज्यों बालू की भीत॥ टेक ॥
ज्यों बालू की भीत ताहि का कौन भरोसा।
ज्यों पक्का फल डार गिरत से लगे न दोसा॥ १ ॥
कच्चे घड़े ज्यों नीर पानी के बीच बताशा।
दारू के भीतर अगिन जीवन की ऐसी आशा॥ २ ॥
पलटू नर तन जात है घास के ऊपर सीत।
धुआँ का सा धौरेहरा ज्यों बालू की भीत॥ ३ ॥

॥ ७ ॥

चोला भया पुराना आज फटै की काल॥ टेक ॥
आज फटै की काल तिहूँ पर है ललचाना।
तीनों पन गये बीत भजन का मरम न जाना॥ १ ॥
नख सिख भये सफ़द तिहूँ पर नाहीं चेतै।
जोर जोर धन धरै गला औरन का रेतै॥ २ ॥
अब क्या करिहौ यार काल ने किया तगादा।
चलै न एकौ ज़ोर आन के पहुँचा वादा॥ ३ ॥
पलटू तेह पर लेत है माया मोह जंजाल।
चोला भया पुराना आज फटै की काल॥ ४ ॥

* * * * *

॥ ८ ॥

अपनी ओर निभाइये हार पड़ो की जीत।। टेक ।।
हार पड़ो की जीत ताहि की लाज न कीजै।
कोटिक बहें बयार क़दम आगे को दीजै।। १ ।।
तिल तिल लागै घाव खेत सों टरै सो नाहीं।
गिर गिर उठै सम्हाल सोई है मरद सिपाही।। २ ।।
लड़ लीजै भर पेट कान कुल आप न लावे।
उन की उनके हाथ बड़ों से सब बन आवे।। ३ ।।
पलटू सतगुरु नाम से सच्ची कीजै प्रीत।
अपनी ओर निभाइये हार पड़ो की जीत।। ४ ।।

॥ ९ ॥

सातपुरी हम देखिया देखे चारों धाम।। टेक ।।
देखे चारों धाम सबन में पत्थर पानी।
करमन के बस पड़े मुक्ति की राह भुलानी।। १ ।।
चलत चलत पग थके छीन भइ अपनी काया।
काम क्रोध नहिं मिटा बैठ कर बहुत अन्हाया।। २ ।।
ऊपर डाला धोय मैल दिल बीच समाना।
पत्थर में गया भूल संत का मरम न जाना।। ३ ।।
पलटू नाहक पच मुए सन्तन में है नाम।
सात पुरी हम देखिया देखे चारों धाम।। ४ ।।

॥ १० ॥

सतगुरु सिकलीगर मिलै जब छुटै पुराना दाग़।।टेक ।।
जब छुटै पुराना दाग़ गड़ा मन मुरचा माहीं।। १ ।।
झाँवा लेवै जोग तेग़ को मलै बनाई।
जौहर दिये निकार सुरत का रन्द चलाई।। २ ।।
शब्द मरकुला करे ज्ञान का कुरमा लावै।
जोग जुगत से मले दाग़ जब मन का जावै।। ३ ।।
पलटू सैफ़ को साफ़ कर बाढ़ धरै बैराग।
सतगुरु सिकलीगर मिलै जब छुटै पुराना दाग़।। ४ ।।

॥ ११ ॥

साहब के दरबार में केवल भक्ति पियार॥ टेक ॥
केवल भक्ति पियार गुरू भक्ति में राज़ी।
तजा सकल पकवान खाया दासी सुत भाजी॥ १ ॥
जप तप नेम अचार करे बहुतेरा कोई।
खाये सिवरी के बेर मुए सब ऋषि मुनि रोई॥ २ ॥
राजा युधिष्ठिर यज्ञ बटोरा जोरा सकल समाजा।
मरदा सब का मान सुपच बिन घंट न बाजा॥ ३ ॥
पलटू ऊँची ज़ात का मत कोइ करे अहंकार।
साहब के दरबार में केवल भक्ति पियार॥ ४ ॥

॥ १२ ॥

बैरागिन भूली आप में जल में खोजे राम॥ टेक ॥
जल में खोजे राम जाय कर तीरथ छाने।
भरमें चारों खूँट नहीं सुध अपनी आने॥ १ ॥
फूल माहिं ज्यों बास काठ में अगिन छिपानी।
खोदे बिन नहिं मिले आहि धरती में पानी॥ २ ॥
दूध माहिं घृत रहे छिपी मेहँदी में लाली।
ऐसे पूरन ब्रह्म कहूँ इक तिल नहिं ख़ाली॥ ३ ॥
पलटू सतसंग बीच में कर ले अपना काम।
बैरागिन भूली आप में जल में खोजै राम॥ ४ ॥

॥ १३ ॥

संशय रूपी अगिन में जले सकल संसार॥ टेक ॥
जले सकल संसार जलत नरपति को देखा।
बादशाह उमराव जलें सइयद और शेखा॥ १ ॥
सुर नर मुनि सब जलें जलें जोगी संन्यासी।
पंडित चतुरा जलें जलें कनफटा उदासी॥ २ ॥
जंगम सेवड़ा जलें जलें नागा बैरागी।
तपसी दूना जलें बचे कोई नाहीं भागी॥ ३ ॥
पलटू बच गये संत जन जिनके नाम अधार।
संशय रूपी अगिन में जले सकल संसार॥ ४ ॥

* * * * *

॥ १४ ॥

पड़ा रहे संत के द्वारे बनत बनत बन जाय॥ टेक॥
तन मन धन सब अरपन करके धके धनी के खाय॥ १ ॥
स्वान बिर्त आवे सोइ खावे रहे चरन लौ लाय॥ २ ॥
मुरदा होय टरै नहिं टारे लाख कहो समझाय॥ ३ ॥
पलटूदास काम बन जावे इतने पै ठहराय॥ ४ ॥

॥ १५ ॥

भाग रे भाग फक्कीर के बालके कनक ओर कामनी बाघ लागा॥१॥
मार तोहिं लेयँगे पड़ा चिल्लायगा बड़ा बेकूफ़ तू नाहिं भागा॥२॥
सिंगी ऋषि से तो मार लिये बचे नहिं कोई जो लाख त्यागा॥३॥
दास पलटू कहे बचेगा सोई जो बैठ सतसंग दिन रात जागा॥४॥

दरिया साहब का शब्द

दरिया दरबारा खुल गया अजर केवाड़ा॥ टेक ॥
चमकी बीज चली ज्यों धारा, ज्यों बिजुली बिच तारा।
खुल गये चन्द बन्द बदरी का, घोर मिटा अँधियारा॥ १ ॥
लौ लगी जाय लगन के लारा, चाँदनी चौक निहारा।
सूरत सैल करे नभ ऊपर, बंकनाल पट फारा॥ २ ॥
चढ़ गई चाँप चली ज्यों धारा, ज्यों मकरी मकतारा।
म मिली जाय पाय पिय प्यारा,ज्यों सलिता जल धारा॥ ३ ॥
देखा रूप अरूप अलेखा, लेखा वार न पारा।
दरिया दिल दरवेश भये तब, उतरे भवजल पारा॥ ४ ॥

मीरा बाई का शब्द

मीरा मन मानी, सुरत सैल असमानी ॥ टेक ॥
जब जब सुरत लगे वा घर की, पल पल नैनन पानी॥ १ ॥
ज्यों हिये पीर तीर सम सालत, कसक कसक कसकानी॥ २ ॥
रात दिवस मोहिं नींद न आवत, भावे अन्न न पानी॥ ३ ॥
ऐसी पीर बिरह तन भीतर, जागत रैन बिहानी॥ ४ ॥
ऐसा बैद मिलै कोइ भेदी, देस बिदेस पिछानी॥ ५ ॥
तासों पीर कहौं तन केरी, फिर नहिं भरमों खानी॥ ६ ॥

खोजत फिरों भेद वा घर को, कोई न करत बखानी।। ७ ।।
रैदास संत मिले मोहिं सतगुरु, दीना सुरत सहदानी।। ८ ।।
मैं मिल जाय पाय पिय अपना, तब मोरी पीर बुझानी।। ९ ।।
मीरा ख़ाक ख़लक सिर डारी, मैं अपना घर जानी।। १० ।।

नाभा जी का शब्द

नाभा नभ खेला, कँवल केल सर सैला।। टेक ।।
दरपन नैन सैन मन माँजा, लाजा अलख अकेला।
पल पर दल दल ऊपर दामिन, जोत में होत उजेला।। १ ।।
अण्डा पार सार लख सूरत, सुन्नी सुन्न सुहेला।
चढ़ गई धाय जाय गढ़ ऊपर, शब्द सुरत भया मेला।। २ ।।
यह सब खेल अखेल अमेला, सिन्ध नीर नद मेला।
जल जलधार सार पद जैसे, नहीं गुरू नहिं चेला।। ३ ।।
नाभा नैन ऐन अन्दर के, खुल गये निरख निहारा।
संत उचिष्ट वार मन झेला, दुर्लभ दीन दुहेला।। ४ ।।

सूरदास के शब्द

।। शब्द पहिला ।।

मुरली धुन गाजा, सूर सुरत सर साजा।। टेक ।।
निरखत कँवल नैन नभ ऊपर, शब्द अनाहद बाजा।। १ ।।
सुन धुन मैल मुकर मन माँजा, पाया अमीरस झांझा।। २ ।।
सूरत संध सोध सत काजा, लख लख संत समाजा।। ३ ।।
घट घट कुंज पुंज जहाँ छाजा, पिण्ड ब्रह्मण्ड बिराजा।। ४ ।।
फोड़ अकाश अललपछ भाजा, उलट के आप समाजा।। ५ ।।
ऐसे सुरत निरख निःअक्षर, कोट कृष्ण तहाँ लाजा।। ६ ।।
सूरदास सार लख पाया, लख लख अलख अकाया।। ७ ।।
सतगुरु गगन गली घर पाया, सिन्ध में बुन्द समाया।। ८ ।।

।। शब्द दूसरा ।।

जा दिन मन पंछी उड़ जैहैं ।। टेक।।
ता दिन तेरे तन तरवर की, सबै पात झड़ जइहैं।। १ ।।

या देही का गर्व न करिये, स्यार काग गिध खइहैं।। २ ।।
तीन नाम तन विष्टा कृम होय, नातर ख़ाक उड़इहैं।। ३ ।।
कहाँ वह नैन कहाँ वह शोभा, कहँ रँग रूप दिखइहैं।। ४ ।।
जिन लोगन सों नेह करत हो, सो तोहि देखि घिनइहैं।। ५ ।।
जिन पुत्रन को बहु प्रति पाल्यो, देवी देव मनइहैं।। ६ ।।
तेहि ले बाँस दियो खोपड़ी में, सीस फाड़ बिखरइहैं।। ७ ।।
घर के कहत सबेरे काढ़ो, भूत होय घर खइहैं।। ८ ।।
अजहूँ मूढ़ करो सत संगत, संतन में कछु पइहैं।। ९ ।।
नर बपु धर जो जन नहिं गुरु के, जम के मारग जइहैं।।१० ।।
सूरदास संत भजन बिन, बृथा सो जनम गँवइहैं।। ११ ।।

धरमदास का शब्द

भक्ति दान गुरु दीजिये देवन के देवा हो।
जनम पाय न बीसरों करिहों पद सेवा हो।। १ ।।
तीरथ बरत मैं ना करूँ ना देवल पूजा हो।
मनसा बाचा करमना मेरे और न दूजा हो।। २ ।।
आठ सिद्ध नौ निद्ध हैं बैकुण्ठ का बासा हो।
सो मैं ना कुछ माँगहूँ मेरे समरथ दाता हो।। ३ ।।
सुख संपति परिवार धन सुन्दर बर नारी हो।
सुपने इच्छा ना उठे गुरु आन तुम्हारी हो।। ४ ।।
धरमदास की बेनती समरथ सुन लीजै हो।
आवागवन निवार के अपना कर लीजै हो।। ५ ।।

गूदड़ साँई का शब्द

सइयाँ हमरे पठइन एक चोली।। टेक ।।

सो चोलिया पाँच नव बूटा की, चोलिया पहिर के भइउँ अनमोली।।१।।
सो चोलिया हम तन मन पहिरी, चोलिया का बँद सतगुरु खोली।।२।।
ब्याह भयो मेरो गवनो नगिचानो, ज्ञान ध्यान की चढ़ चली डोली।।३।।
कहें गूदड़ धन भइलूँ ससुरैती, नइहर की बात सबै हम भूली।।४।।

दूलनदास के शब्द

जो कोई भक्ति किया चाहे भाई।। टेक ।।

कर बैराग भसम कर गोला, सो तन मन में चढ़ाई।। १ ।।
ओढ़ के बैठ अधिनता चादर, तज अभिमान बड़ाई।। २ ।।
प्रेम प्रतीत धरै एक तागा, सो रहे सुरत लगाई।। ३ ।।
गगन मंडल बिच अभिरन झलकत, क्यों न सुरत मन लाई।। ४ ।।
शेष सहस मुख निस दिन बरनत, वेद कोट गुन गाई।। ५ ।।
शिव सनकादि आदि ब्रह्मादिक, ढूँढ़त थाह न पाई।। ६ ।।
नानक नाम कबीर मता है, सो मन प्रगट जनाई।। ७ ।।
ध्रुव प्रहलाद यही रस माते, शिव रहे ताड़ी लाई।। ८ ।।
गुरु की सेवा साध की संगत, निस दिन बढ़त सवाई।। ९ ।।
दूलनदास नाम भज बन्दे, ठाढ़ काल पछताई ।। १० ।।

।। शब्द ।।

जग में जै दिन है ज़िन्दगानी ।। टेक ।।

लाई लेव चित गुरु के चरनन, आलस करहु न प्रानी।। १ ।।
यह देहिन का कौन भरोसा, उभसा भाटा पानी।। २ ।।
उपजत मिटत बार नहिं लागत, क्या मग़रूर गुमानी।। ३ ।।
यह तो है करता की क्दरत, नाम तो ले पहिचानी।। ४ ।।
आज भलो भजने को औसर, काल की काहु न जानी।। ५ ।।
काहु के हाथ साथ कछु नाहिं, दुनिया है हैरानी।। ६ ।।
दूलनदास विश्वास भजन कर, यहि है नाम निशानी।। ७ ।।

।। शब्द ।।

चलो चढ़ो मन यार महल अपने ।। टेक ।।

चौक चाँदनी तारे झलकें, बरनत बनत न जात गिने।। १ ।।
हीरा रतन जड़ाव जड़े जहाँ, मोतिन कोटि किलान बने।। २ ।।
सुखमन पलँगा सहज बिछौना, सुख सोवो को करे मने।। ३ ।।
दूलनदास के साँई जगजीवन, को आवे यह जग सुपने।। ४ ।।

* * * * *